

मदनलाल, छटवीं, अमलेटा, रत्नाम



चकमक काल विज्ञान पत्रिका

वर्ष 4 अंक 5 नवंबर, 1988

संपादक

विनोद रायना

सह-संपादक

राजेश उत्साही

कला

जया विवेक

उत्पादन/वितरण

हिमांशु विस्वास, कमलसिंह

काल संदर्भ

उत्साही: 15 लप्पे

वार्षिक: 30 लप्पे

काल, खर्च मुफ्त

संदर्भ, मनीआर्डर या बैक ड्राफ्ट
से एकलव्य के नाम पर भेजें।

कृपया बैक, न भेजें।

पत्र/संदर्भ/रखना भेजने का पता:

ई-1/208, अरेरा कालोनी

भोपाल-462 016 (म.प्र.)

कागज़ : 'यूनिसेफ' के सोजन्य से

सहर्षीग : राष्ट्रीय विज्ञान व औद्योगिकी

संचार प्रौद्योगिकी (विज्ञान व औद्योगिकी

विज्ञान, नई दिल्ली)

भारती चौहान, तीसरी, टिमरनी

इस अंक में...

- | | |
|----|----------------------------|
| 2 | चकमक दोस्त |
| 3 | वैज्ञानिक रामन |
| 12 | मेरा पन्ना |
| 16 | कहानी : छोटी चिड़िया |
| 19 | खतरा; स्कूल |
| 25 | कहानी : इंतज़ार |
| 27 | कविता : क्यों? |
| 28 | माथापच्ची |
| 30 | कान की कहानी |
| 33 | अपनी प्रयोगशाला |
| 35 | गिजुभाई की कलम से |
| 37 | धारावाहिक : नन्हा राजकुमार |

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अध्यत्मसाधिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्थापानिक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

1. अनिल खिंखिकारा, आठवीं
2. ट्रक बनाना, प्रोजेक्ट बनाना, फिल्म देखना
3. शा.उच्च.मा. शाला, चांदमेटा
1. नादिर अली जाफरी, आठवीं
2. खादा पढ़ना, क्रिकेट खेलना, कम सोना
3. नई बस्ती, टेहरका, टीकमगढ़
1. अनीस तिवारी 'बंटी', 8 वर्ष
2. क्रिकेट खेलना, कामिक्स पढ़ना, कार्टून बनाना
3. पोंडा, सिहारा, जबलपुर
1. सत्यम तारे, 18 वर्ष
2. पत्रिकाएं पढ़ना, प्रतियोगिता में भाग लेना
3. 483, खेड़पति मार्ग, महेश्वर
1. घनश्याम पटवा, 16 वर्ष
2. पत्रिकाएं पढ़ना, आकाशवाणी के कार्यक्रम सुनना, पत्र व्यवहार करना
3. जुड़ारपुर, दतिया
1. गरिमा तिवारी, 7 वर्ष
2. अभिनय, टी.वी. देखना
3. अशोक नगर, प्री गंज, उज्जैन
1. विनय कुमार, छठवीं
2. फिल्म देखना, फुटबाल खेलना
3. शा.उच्च.मा. शाला, चांदमेटा
1. रविकुमार शर्मा, 14 वर्ष
2. पत्र मित्रता, दोस्तों को हँसाना, विज्ञान के प्रयोग करना
3. द्वारा चंद्रप्रकाश शर्मा, सरस्वती शिशु मंदिर के पास, सर्पी पीपल, रांझी, जबलपुर
1. मुजीत सिंह गुरुआई, 13 वर्ष
2. मजाक करना, डराना
3. क्वा. नं. G-95, एस.पी.एम., होशंगाबाद
1. कृष्ण कुमार दुबे, 12 वर्ष
2. युहसवारी करना, शपारत करना
3. क्वा. नं. GR 6 एस.पी.एम., होशंगाबाद
1. पंकज, 13 वर्ष
2. चकमक पढ़ना, खेलना, गप छोड़ना
3. क्वा. नं. A/100 एस.पी.एम., होशंगाबाद
1. रेखा गौरहा, 17 वर्ष
2. पढ़ना, रंगोली बनाना, नौकरी करना, बागवानी करना
3. सिलकुली सूखपुर
1. हेमा नाहटे, 18 वर्ष
2. पढ़ना, खेलना, घूमना
1. परेश कुमार नाहटे, 16 वर्ष
2. क्रिकेट खेलना, कहनिया पढ़ना
1. सुरेश कुमार नाहटे, 14 वर्ष
2. क्रिकेट खेलना, पहेलियां बुझाना
- सबका पता : पूर्व. मा.क. छात्रावास, तिलकेश्वर रोड, रत्लाम
1. नूतनरानी याय, 11 वर्ष
2. पढ़ना, लिखना, खेलना
3. क.मा. शाला, बाकल, जबलपुर
1. रणजीत कुमार याय, 9 वर्ष
2. चकमक देखना
3. पूर्व. मा.शा. बाकल, जबलपुर

चकमक दोस्त



चित्र : अशोक, पांचवीं टिगारिया गोणा, देवास

1. नाम
2. स्तरियां
3. पता

1. ओमप्रकाश गौर, 13 वर्ष
2. शतरंज खेलना, पढ़ना
3. द्वारा श्री बृजलाल गौर, आनन्द नगर, खिरकिया
1. विनोद अनवेकर, बाहर्वीं
2. लेख, कहानी, लिखना, ज्ञानवर्धक किताबें पढ़ना, रसायनशास्त्र के प्रयोग करना
3. रीजनल वर्कशाप के पास, पुणे ग्राम पंचायत के पीछे, चांदमेटा, छिंदवाड़ा
1. कुमारी पिको सरोया, छठवीं
2. चंगोपा खेलना, चुटकुले वाली किताब और चकमक पढ़ना
3. द्वारा गतपत लाल सरोया, मकान नं. 13, गली नं. 7, किशनपुरा, छोटे कुएं के पास, मक्सी रोड, उज्जैन
1. सुरेन्द्र पोरवाल, 13 वर्ष
2. चित्र बनाना, पढ़ना, मजाक करना
3. बुधवारा, आष्टा
1. आशुतोष तिवारी, 12 वर्ष
2. कहानी पढ़ना एवं लिखना
3. द्वारा सी.एम. तिवारी, प्राचार्य, बुदार, शहडोल
1. सारिका दीवान, 12 वर्ष
2. पुस्तक पढ़ना, फिल्म देखना, स्कूल में पढ़ाई
3. द्वारा पी.डी. दीवान, माझन नगर, गोविंद भवन, बाबई
1. गोविंद माहेश्वरी, 15 वर्ष
2. पुस्तकें पढ़ना, रचना लिखना
3. कोठरी बुक डिपो, बकतरा, सीहोर
1. संजय चौहान, दसवीं
2. पढ़ाई करना और खेलना
3. 151, विश्राम बाग, ए.बी. रोड, देवास
1. सलाम, 14 वर्ष
2. छिपायाची खेलना, चकमक पढ़ना
1. रमेशचंद्र विश्वकर्मा
2. पढ़ना, चित्रकारी, तस्वीर बनाना
1. प्रकाश, तीसरी
2. रसीकूद, गीत गाना, प्रयोग करना
3. सबका पता : शासकीय प्राथमिक विद्यालय मानकुड़, देवास
1. राम भगतसेन, 14 वर्ष
2. पेटिंग, रेडियो सुनना, चकमक पढ़ना
3. शासकीय हायरसेकेंडरी स्कूल, घूरा, छतरपुर
1. अशफाक अहमद खान, 18 वर्ष
2. पत्रमित्रता करना, घूमना, पढ़ना
3. ब्लाक कालोनी, राहतगढ़
1. ओमप्रकाश चंद्राकर
2. कहानी लिखना, क्रिकेट व कैरम खेलना
1. कुसुम चंद्राकर
2. कैरम खेलना, चकमक पढ़ना
1. आलाराम यदु
2. कैरम खेलना, पेटिंग करना
- सबका पता : ग्राम - लवन, बलौदा बाजार, रायपुर.
1. मनीष कुमारवत, आठवीं
2. चकमक पढ़ना
3. शा.हि.मा.वि.क. 1, सोंवेर, इंदौर
1. भरत कुमार पुरोहित, 14 वर्ष
2. क्रिकेट, कैरम, खो-खो खेलना
1. सोमशेखर मिश्र, 11 वर्ष
2. क्रिकेट, कैरम खेलना, टी.वी. देखना
3. शा.उच्च.मा. विद्यालय, चंदिया, राहडोल
1. संतोष वर्मा, 15 वर्ष
2. पत्र मित्रता, पत्र-पत्रिका पढ़ना, चकमक पढ़ना
3. शा.उच्च.मा.वि. तोगपाल, बस्तर
1. दिनकर पाण्ड्या, 18 वर्ष
2. युजिक डांस एवं आर्ट्स
1. मधुकर पाण्ड्या, 17 वर्ष
2. मुफ्त की पिक्चर देखना
1. प्रभाकर पाण्ड्या, 13 वर्ष
2. डांक टिकट सिवके व माचिस जमा करना
- सबका पता : 117/K-49, सर्वोदय नगर, कानपुर
1. विकास सातले, 8 वर्ष
2. क्रिकेट खेलना, स्कूल जाना, चकमक पढ़ना
3. शा. प्राथमिक शाला, मिटावल, खरगोन
1. अवधेश पाणशर, 13 वर्ष
2. पत्रिकाएं पढ़ना, सायकिल चलाना, देशी खेल खेलना, बैज्ञानिक खोज व आविष्कार करना
3. शा.उच्च.मा. विद्यालय नायकपुरा, मुरैना
1. ऋषि श्रीवास्तव, 15 वर्ष
2. चित्र संग्रह करना, ऐतिहासिक स्थानों का प्रमण करना
3. शिक्षक सदन के पीछे, सिविल लाइन, मेंडला
1. नरेन्द्र कुमार वर्मा, 16 वर्ष
2. पढ़ना, खेलना, घूमना
3. महात्मा गांधी मार्ग, महेश्वर
1. शशांक शुक्ला
2. क्रिकेट, चित्रकारी, पढ़ाई
3. परदेशी पुण, शाहुपुर, बैतूल
1. अव्यालाल, छठवीं
2. कैरम खेलना, चकमक पढ़ना, सायकिल चलाना
3. माध्यमिक विद्यालय, लसूड़िया, राठौर, मंदसौर

चकमक

नंबर, 1988

वैज्ञानिक चंद्रशेखर वेंकटरामन

स्कूलों, दफ्तरों, दूकानों आदि में छुट्टी हो जाती है तो लोग साइकिलों से, बसों से, तांगों से या ट्रामों से अपने घरों की ओर भागते हैं। उन्हें जल्दी होती है कि घर चलें, आराम करें और दिन भर की थकान उतारें।

बहुत पुरानी बात है...

कलकत्ता में काम करने वाला एक सरकारी अफसर दफ्तर से छुट्टी के बाद ट्राम में घर जा रहा था। पर यह क्या! वह ट्राम से कूद क्यों गया? उसे तो स्यालदा तक ट्राम में ही जाना था; स्यालदा में उसका घर था।

वह ट्राम कंडक्टर तो था नहीं, जो टिकट चेक करने चाहा हो और काम करके बीच में ही, जहां जी आया, उतर गया। उस अफसर को इतना अनाड़ी भी नहीं कह सकते कि मटरगश्ती करने के इरादे से बीच में ही उतर पड़ा हो।

ट्राम खट-खट करती चलती है। पर कलकत्ता की ट्राम में खट-कट का खटराग नहीं था। तो क्या हुआ—ट्राम या बस में यात्रियों को गपबाजी या अपने अड़ोसी-पड़ोसी की चुगलखोरी से ही फुर्सत नहीं मिलती। कोई दिन भर के काम की शिकायत करता है तो कोई अफसरों के सख्त मिजाज का रोना-रोता है। पर यह क्या! यहां तो यही मालून देता है कि वह अफसर अपने ही ध्यान में मगन चला जा रहा है—और उसके ध्यान की ओर कहीं दूर, बहुत दूर बंधी हुई है और उस ओर का जब एक सिरा नज़र आता है तो वह उसी से खिंचा नीचे उतर जाता है। उस समय उसे न दिन भर की थकावट का ध्यान रहता है और न घर जाकर आराम करने का—उड़कर घर पहुंचने का।

बात यह हुई कि उस अफसर ने एक बोर्ड देखा...

पर यह बोर्ड किसी हलवाई या 'रोशगोल्ला' वाले की दुकान का न था, न खेल-खिलौने की दुकान का कि बच्चों के लिए गुड़ा-गुड़िया ही लेते चलें।

तो भारत सरकार का यह बड़ा अफसर बीच में ही क्यों उतर पड़ा?

मैंने अभी कहा न कि जो अपने ध्यान में मगन होता है, वह सब-कुछ भूल जाता है। उसे ध्यान में रहता है केवल अपने लक्ष्य का। इधर-उधर की दुनिया की बातें उसका ध्यान अपनी ओर नहीं खींचतीं। यह अफसर और कोई नहीं, आज की हमारी कहानी के नायक श्री चंद्रशेखर वेंकट रामन थे—उस समय की भारत सरकार के डिप्टी एकाउण्टेण्ट जनरल।

बात यह थी कि रामन को विज्ञान से इतना लगाव था कि वह सोते-जागते, खाते-पीते सदा उसी के ध्यान में मगन रहते थे। अब तक उन्हें ऐसी जगह नहीं मिली थी जहां बैठकर वह विज्ञान के प्रयोग कर सकें। पर आज उन्हें वह जगह मिल गई; इसीलिए उन्हें यह ध्यान न रहा कि घर भी पहुंचना है।

आकर्मिङ्ग का नाम शायद तुमने सुना होगा। वह प्राचीन काल के एक महान वैज्ञानिक थे। वह इसी तरह कई दिनों से एक समस्या में उलझे हुए थे। एक दिन वह नहा रहे थे। जब वह कपड़े उतारकर टब में घुसे तो टब का कुछ पानी बाहर निकल गया। बस, उनकी समस्या का हल भी निकल आया। वह अपने ध्यान में इतने ढूबे थे कि वहीं से खुशी में 'पा गया, पा गया' चिल्लाते हुए भागे। उन्हें यह भी ध्यान न रहा कि मैं निर्वस्त्र हूं, तन पर एक लंगोटी भी नहीं है।

रामन ने वह बोर्ड देखा—जिस पर लिखा था : 'भारतीय विज्ञान परिषद्'। हाँ, तो ट्राम से कूदते समय श्री रामन के मुँह से भी 'पा गया, पा गया' शब्द झारूर निकले होंगे। बात ही ऐसी थी। उनकी रुचि तो थी विज्ञान की ओर, पर सहूलियत न मिलने के कारण वह आ फंसे थे रुपए-पैसे के हिसाब के चक्कर में। पर इतने साल नौकरी करने पर भी विज्ञान का नशा उनके सिर से न उतरा था।

यह भी कम हैरानी की बात नहीं कि मौका न मिलने पर रामन एकाउण्टेण्ट बन गए। फिर दस साल के

अरसे को भी देखो! सचमुच कितना लंबा अरसा है। आदमी सुबह का खाया शाम को भूल जाता है, नौकरी के चक्कर में पड़कर कोल्हू का बैल बन जाता है। बैल की आंख पर पट्टी बंधी रहती है। वह गोल धेरे में घूमता रहता है, घूमता रहता है—उसे किसी और बात से कुछ मतलब नहीं रहता।

इसी तरह आज के लोग, साधारण लोग, सुबह दफ्तर जाते हैं और शाम को लौट आते हैं। उन्हें इस चक्कर के अलावा कुछ याद ही नहीं रहता, दूसरा कोई ध्यान ही नहीं रहता। पर रामन एक ऊंचे ओहदे पर दस साल रहकर भी अपने असली ध्येय को न भूले, न भूले। उन्हें आराम भी था और रूपया-पैसा भी मिल रहा था। पर नहीं, उन्हें विज्ञान जगत में कुछ करना था। इसीलिए वह मौके की ताक में रहते थे और अब जैसे ही मौका हाथ आया, लपककर उसे पकड़ लिया।

सचमुच यही बड़ी बात थी, बहुत बड़ी। यदि रामन नौकरी के चक्कर और रूपए-पैसे के फेर में पड़कर अपने असली ध्येय को भूल जाते, तो उन्हें कौन याद करता? आज जितना बड़ा काम वह कर गए हैं, या जो कुछ उन्होंने किया, वह शायद किसी और के ज़रिए होता—और उस सरकारी अफसर रामन को कोई याद भी न करता।

तो आओ, हम शुरू से उस कहानी का तार पकड़ें। बीच-बीच में से कहानी तो मैं कह दूँ, पर तुम्हें मजा न आएगा। इसलिए कहानी कहने का मैं वही पुराना तरीका अपना रहा हूँ जो मेरी दादी-नानी ने अपनाया था।



भारत का एक नगर—त्रिचनापल्ली।

इसी त्रिचनापल्ली में सात नवम्बर 1888 को रामन का जन्म हुआ।

रामन तो ब्राह्मण परिवार के थे। उनके पूर्वज खेती-बारी का, ज़र्मिंदारी का काम करते थे। तंजोर जिले अच्यमपेट के पास के गांव इनकी ज़र्मिंदारी में थे।

अपना गांव क्यों छोड़े? भले ही वहां भूखों मरना पड़े! भले ही वहां बीमारी में सड़-घुलकर जीवन से हाथ धोने पड़े!

भारत के बहुत से लोग आज भी दूर-दूर के गांवों में इसीलिए पड़े हैं। उन्होंने रेलगाड़ी तक के दर्शन नहीं किए। पर रामन के पिता ने दकियानूसी विचारों को लात मार दी और 4 उन्नति की राह की खोज में निकल पड़े। वह अपने परिवार

में पहले आदमी थे जिन्होंने अपनी और अपने बच्चों की भलाई के लिए अपना गांव छोड़ा और अंग्रेजी पढ़ने लगे।

बालक रामन ने जब इस लंबी-चौड़ी दुनिया में आंखें खोलीं तो उस समय उनके पिता त्रिचनापल्ली के स्कूल में मास्टर थे। मास्टरी करने के साथ ही वह प्राइवेट बी.ए. की तैयारी भी कर रहे थे। बी.ए. कर लेने पर वहां के एक कालेज में पढ़ने लगे। रामन के पिता भौतिक विज्ञान और गणित के अच्छे विद्वान थे।

और संगीत?

संगीत तो दक्षिण की खास देन है। रामन के पिता बीणा बजाने में भी बहुत कुशल थे।

जिन खोजा तिन पाइयां। रामन के पिता ने अपना गांव

जिस चीज़ की खोज में छोड़ा था, उसे पा लिया ।

और श्रीमती पार्वती अम्मल !

यही रामन की माता थीं—एक अच्छे पढ़े-लिखे परिवार की कन्या । परिवार बालों में पढ़ने की अनोखी धुन थी । एक बार अम्मल के पिता को न्यायशास्त्र पढ़ने की धुन सवार हुई । सोचो, कहां बंगाल और कहां मद्रास का त्रिचनापल्ली । बस चल पड़े पैदल, और जा पहुंचे एक बंगाली न्यायशास्त्री के पास । न्यायशास्त्री शहर के कोलाहल से दूर, एक छोटे से गांव के एकान्त कोने में, अपने ही खर्च पर विद्यार्थियों को न्यायशास्त्र पढ़ाते थे ।

उन दिनों बंगाल न्यायशास्त्र के विद्वानों का गढ़ था और भारत के कोने-कोने से विद्यार्थी वहां पहुंचते थे । विद्यार्थी अक्सर वहां रहते और विद्याध्ययन करते । गुरु-पत्नी उनके लिए भात रांध देती और विद्यार्थी उसी से संतुष्ट रहते ।

ऐसा था उन दिनों पढ़ने-पढ़ाने का ढंग !

इस प्रकार बालक रामन को साहस, लगन और ज्ञान प्राप्त करने के गुण माता-पिता से मिले । पिता से जहां उन्होंने विज्ञान के प्रति रुचि प्राप्त की, वहां अपनी स्नेहमयी मां की गोद में ही साहस और लगन का पहला सबक सीखा और ऐसा सीखा जो अंत तक नहीं भूले ।

स्कूल ।

पुत्र छात्र और पिता अध्यापक ।

जिस समय बालक रामन को स्कूल भेजा गया उस समय उनके पिता विजगापट्टम के बाल्तेयर कालेज में अध्यापक थे । एक तो घर भर की शिक्षा में रुचि, दूसरे विजगापट्टम स्थान । वहां का एक समुद्री किनारा और मनोरम वातावरण । पढ़ने को खुद-ब-खुद मन करे ।

प्रिसिपल आयंगर अंग्रेजी पढ़ाते थे और रामन के पिता गणित और भौतिक विज्ञान । दोनों के पास रहकर बालक रामन खूब मन लगाकर पढ़ने लगा । कुछ लोग इस जमाने में भी कहते सुने जाते हैं : ‘पढ़ोगे-लिखोगे बनोगे नवाब, खेलोगे-कूदोगे होगे खराब ।’ खैर, अब तो वैसे ही नवाबी के दिन लद गए, पर वे बालक भी कितने भाग्यहीन हैं जो अवसर मिलने पर भी ठीक से नहीं पढ़ पाते ।

रामन ने आयंगर साहब से बढ़िया अंग्रेजी सीखने की प्रेरणा ली और अपने पिता के कारण उनका दृक्काव विज्ञान की ओर हुआ । फल यह हुआ कि हाई स्कूल तक पहुंचते-पहुंचते रामन ने अंग्रेजी का खूब अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया; साथ ही विज्ञान के कई बड़े-बड़े पोथे भी पढ़ डाले । रामन विज्ञान की सरिता में इतना ढूबे रहने लगे कि उन्हें अपने शरीर की

सुध-बुध भी न रहती । न खाने का वक्त, न टहलने का, न ठीक से सोने का । और इसका फल यह हुआ...

क्या?

यही कि स्वास्थ्य खराब होने लगा ।

दरअसल, ‘पढ़ोगे-लिखोगे बनोगे नवाब’ का यह मतलब तो नहीं कि स्वास्थ्य का ध्यान ही न रखो । खैर, स्वास्थ्य खराब होने के कारण रामन को कुछ समय के लिए पढ़ाई छोड़ देनी पड़ी; परंतु पढ़ाई छोड़ देने के बावजूद रामन ने बारह वर्ष की उम्र में मैट्रिक परीक्षा पास कर ली । परीक्षा पास की बहुत सम्मानपूर्वक ।

विज्ञान का चस्का इतना लग चुका था कि बीमारी के दिनों में ही बार-बार नए परीक्षण करने, चीज़ों को देखने-समझने, की इच्छा होती रही । एक बार तो बीमारी की हालत में ही रामन ने परीक्षण करने की जिद पकड़ ली । मैट्रिक पास कर लेने के बाद तो कई सफल परीक्षण भी कर डाले ।

पर यह क्या? विज्ञान से रुचि हट गई और एकदम धार्मिक ग्रंथों को पढ़ना शुरू कर दिया ।

बात यह हुई कि पिता सारे दिन कालेज में पढ़ाने के काम में लगे रहते । उन दिनों श्रीमती एनी बेसेण्ट ने भारत में एक नई धार्मिक भावना की लहर चलाई जिससे अनेक आदमी प्रभावित हुए ।

इन्हीं एनी बेसेण्ट के लेख पढ़कर और भाषण सुनकर रामन भी विज्ञान को भूलकर धार्मिक विषयों की ओर झुके । रामायण-महाभारत तथा अन्य अनेक पुस्तके इतनी अच्छी तरह और ध्यानपूर्वक पढ़ीं कि इनके संबंध में जो कुछ उस छोटी सी आयु में लिखा उसका भी सम्मान हुआ । इनके एक निबंध पर तो एक बार पुरस्कार भी मिला । और यही वजह हुई कि मैट्रिक के बाद जब एफ.ए. पास किया तो उसमें विज्ञान का विषय नहीं लिया । पर एफ.ए. पास किया प्रथम श्रेणी में ।

धार्मिक ग्रंथों का नशा जल्द ही उतर गया ।

1903 का जनवरी महीना ।

बी.ए. के लिए मद्रास के प्रेसीडेंसी कालेज में नाम लिखवाया । घर बाले और दूसरे संबंधी रामन की योग्यता और हर विषय को समझने और ग्रहण करने की उनकी असाधारण प्रतिभा को देखकर जानते हो क्या चाहते थे? वे चाहते थे कि रामन पढ़-लिखकर कोई ऊँची सरकारी नौकरी करे, ऊँचे ओहदे पर पहुंचे, बड़ा अफसर कहलाए । इसलिए वे कहने लगे कि बी.ए. में इतिहास आदि आसान विषय लिए जाएं जिससे बड़ी नौकरियों के लिए जो प्रतियोगिता हो, उसमें खूब नंबर मिलें ।

परंतु नहीं। रामन में फिर विज्ञान-प्रेम जाग उठा था। रामन ने उन सबकी बात मानने से इंकार कर दिया और संबंधियों से साफ-साफ कह दिया, मैं वही विषय पढ़ूँगा, जो मुझे सबसे अधिक भाता है, और जिसमें मेरी सबसे अधिक रुचि है। और छोटे से—तेरह-चौदह वर्ष के—रामन ने इतिहास आदि सरल विषय छोड़कर फिर विज्ञान की कठिन शिक्षा प्राप्त करनी आरंभ की।

बी.ए. के छात्र अपने कमरे में बैठे थे। इतने में अंग्रेजी पढ़ाने वाले अध्यापक श्री इलियट आए। उन्होंने अपने शिष्यों पर नज़र डाली—और उनकी आंखें एक छात्र पर जा टिकीं। बहुत ही पतला-दुबला था वह और था भी नाटा-सा। पतला-दुबला तो था, पर उसकी उम्र भी तो कुछ न थी—यही तेरह-चौदह वर्ष।

अध्यापक ने समझा कोई लड़का भूलकर इस ऊंची कक्षा में आ बैठा है। टोक ही तो दिया उसे। पूछा :

“क्या तुम इसी कक्षा के छात्र हो?”

“जी, इसी कक्षा का हूँ।”

“क्या तुमने एफ.ए. पास कर लिया है?”

“जी, पास कर लिया है।”

“कहां से?”

“वाल्टेयर कालेज से।”

“तुम्हारी उम्र क्या है?”

“यही चौदह साल।”

“अच्छा? और तुम्हारा नाम क्या है?”

“मेरा नाम चन्द्रशेखर वेंकट रामन है।”

सभी छात्रों का ध्यान रामन पर था। सबने देखा रामन पतला-दुबला भले ही है, पर उसके मुख पर एक तेज है, साहस है, और निररता की झलक है, एक विशेष प्रकार की चमक है।

इसी प्रकार एक दिन प्रिसिपल साहब रामन की कक्षा में आए। उनका नाम था नाना साहब। नाना साहब उस बालक को बी.ए. की कक्षा में बैठा देखकर बहुत हैरान हुए। पर, जब उन्होंने रामन से बात की, तो उन्हें विश्वास हो गया कि वह इस कक्षा का विद्यार्थी ही नहीं है, वरन् अन्य छात्रों की अपेक्षा उसे ज्ञान भी अधिक है। उन्हें तो बहुत ही प्रसन्नता हुई। तब से सभी प्रोफेसर और प्रिसिपल रामन पर बहुत ध्यान देने लगे।

प्रिसिपल नाना साहब अपने शिष्य की प्रतिभा को सहज ही पहचान गए। उन्होंने देखा कि रामन को कक्षा में कराए जाने वाले कुछ थोड़े से प्रयोगों में लिपटाए रखना,

उसके साथ अन्याय करना होगा। इससे उसका विकास रुक जाएगा। इसलिए उन्होंने रामन को ऐसे प्रयोगों से छुट्टी-सी दी, क्योंकि ये प्रयोग रामन के लिए पुराने पड़ चुके थे, साधारण मालूम होते थे। नाना साहब ने पुराने प्रयोगों से छुट्टी ही नहीं दी थी, वरन् नए प्रयोग और स्वाध्याय करने में सुविधा और सहायता भी दी।

और आज के लड़के! ज़रा मिलान तो करो। पढ़ेंगे तो कुंजियां और नोट लेकर और साल भर पढ़ाई से जी चुराते रहेंगे या दूसरी तमाशबीनी के कामों में लगे रहेंगे।

और जब बी.ए. का परीक्षा-फल निकला तो रामन ने बहुत अच्छे अंक प्राप्त किए। वह अपने विश्वविद्यालय भर में प्रथम आए। खास बात यह थी कि विश्वविद्यालय भर में रामन ही अकेले थे जो प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए थे।

अब क्या था—होने लगी इनमों-पुरस्कारों की बौछार। भौतिक विज्ञान में बहुत बढ़िया अंक लाने के कारण ‘अर्णो स्वर्ण पदक’ दिया गया। अंग्रेजी के सुन्दर निबंध और उत्तम ज्ञान के कारण भी एक पुरस्कार मिला और विश्वविद्यालय की ओर से भी कई पुरस्कार मिले।

अब आया एम.ए. की पढ़ाई का नंबर।

एम.ए. को पढ़ाई। भारी भरकम पोथे। सुनकर ही कंपकंपी छूटने लगती है। कारण भी कई हैं—एक तो पढ़ाई अपनी मातृभाषा में न होना; दूसरे—विषय को पढ़ाने का विदेशी ढंग और हाजिरी आदि की पांचियां।

एक दिन की बात है, रामन का एक साथी आवाज़ के संबंध में कुछ प्रयोग कर रहा था। उसे कुछ संदेह हुआ। वह सोचता हुआ अपने अध्यापक श्री जोन्स के पास पहुँचा। पर जोन्स महोदय उस समय उस शंका का समाधान न कर पाए। रामन को पता चला। वह सोचने लगे। वह सोचते रहे और शब्द विज्ञान पर एक वैज्ञानिक, जिनका नाम लार्ड रेले है, की खोज को पढ़ने के बाद शंका का एक ना ही समाधान निकाल लिया। मजा यह कि पुराने तरीके की बजाय रामन का यह नया तरीका अधिक अच्छा था। और जब लार्ड रेले को इस बात का पता चला तो उन्होंने रामन की बड़ी प्रशंसा की और बधाई का संदेश भेजा।

प्रोफेसर जोन्स भी इस बात से बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने रामन से कहा कि वह अपने इस प्रयोग के संबंध में एक अच्छा खोजपूर्ण निबंध लिखें। रामन ने खूब मेहनत करके लेख लिखा और उसे देखने के लिए अपने उन्हीं अध्यापक श्री जोन्स महोदय को दे दिया।

पर जोन्स महोदय महीनों उसे अपने पास रखे रहे। लौटाने का या कुछ सुझाव देने का नाम तक न लिया। इस पर

रामन ने उसे दुबारा लिखने का बहाना बनाकर मांगा और छपने के लिए लंदन की विज्ञान संबंधी प्रसिद्ध पत्रिका 'फिलासफिकल मैगज़ीन' के लिए भेज दिया। कारण यह कि भारत में ऐसा कोई पत्र न था जो इस विषय का लेख छापता।

क्या लेख लंदन की पत्रिका में छापा?

हाँ, संपादक ने उसे स्वीकार कर लिया और कुछ दिन बाद उसका प्रूफ संशोधन के लिए रामन के पास भेजा।

प्रूफ लेकर रामन अपने उन्हीं पुराने अध्यापक श्री जोन्स के पास पहुंचे। जोन्स भौतिक के रह गए। मन ही मन कुछ अप्रसन्न भी हुए। भौतिक के इसलिए कि इस लड़के का लेख इतनी प्रसिद्ध पत्रिका ने बिना किसी सिफारिश के स्वीकार कर लिया था, और अप्रसन्न इसलिए कि लेख उनसे पूछे बिना ही छपने के लिए भेज दिया गया था।

परंतु जब रामन ने बताया कि लेख को पहले आपको ही देखने के लिए दिया था और जब महीनों बार-बार पूछने पर भी आपने कुछ न कहा तो मैंने समझ लिया कि आप मेरे विचारों से सहमत हैं। यही सोचकर मैंने लेख प्रकाशनार्थ भेज दिया।

रामन की इस सरलता से प्रोफेसर साहब को तसल्ली हुई और उन्होंने इस बार जल्द ही उस लेख का प्रूफ पढ़कर लौटा दिया।

यह लेख सन् 1906 की नवम्बर महीने की 'फिलासफिकल मैगज़ीन आफ लंदन' में तुम आज भी देख सकते हो।

रामन एक बार 'प्रिज्म' का परीक्षण कर रहे थे कि एक खास तरह की रोशनी का पता चला। इस संबंध में भी उन्होंने एक लेख लिखा। यह लेख भी एक प्रसिद्ध विलायती पत्रिका 'नेचर' में प्रकाशित हुआ।

ऐसी सुन्दर खोजें करते हुए रामन ने जनवरी 1907 में एम.ए. पास किया। वह भी साधारण रूप से नहीं; अब तक भौतिक विज्ञान के विद्यार्थियों ने अधिक से अधिक जितने नंबर लिए थे, उनसे कहीं ज्यादा लेकर। पूरे मद्रास विश्वविद्यालय में उनका स्थान सबसे ऊंचा रहा।

विदेशियों का शासन और विदेशियों की गुलामी। यह गुलामी हम भारतीयों पर बहुत अरसे तक अपना असर डाले रही।

आज हम आज्ञाद हो चुके हैं, पर आज भी हम इसके असर से पूरी तरह से मुक्त नहीं हो पाए। मानसिक दासता की बेड़ियों में हम आज भी बुरी तरह जकड़े हुए हैं।

रामन के सामने भी यही बात आई। एम.ए. कर लिया। अब इनके रिस्टेदारों ने यह सोचा कि भौतिक विज्ञान में और आगे अध्ययन करने के लिए इंगलैण्ड भेजा जाय,



क्योंकि इंगलैण्ड की मुहर लगे बिना न तो आदमी बहुत बड़ा विद्वान माना जा सकता था, न उसे उसके योग्य बड़ी और अच्छी नौकरी ही मिल सकती थी। खैर, अध्यापकों और संबंधियों के यत्न से सरकारी अधिकारी इस बात पर सहमत हो गए कि इन्हें वजीफा देकर पढ़ने के लिए इंगलैण्ड भेजा जाए। पर इतने से ही काम नहीं चलने का था—इसके लिए कुछ और बातें भी ज़रूरी थीं। इनमें से एक बात यह थी कि अच्छी सेहत होने का डाक्टरी सर्टिफिकेट लिया जाए। सबका विचार था कि यह काम बड़ी आसानी से हो जाएगा, पर गाड़ी यहाँ अटक गई।

एक यूरोपियन डाक्टर ने इनके स्वास्थ्य की जांच की और अपना भारी-भरकम सिर हिलाते हुए कहा, 'नहीं, मैं तुम्हें विलायत जाने की इजाजत नहीं दे सकता। न तो तुम समुद्री यात्रा के काबिल हो और न इंगलैण्ड की सर्दी बरदाशत कर पाओगे।'

असल में बात यह थी कि रामन ने कभी अपने स्वास्थ्य की ओर ध्यान नहीं दिया था। वह तो दिन भर पढ़ने और नए-नए प्रयोग करने में ही लगे रहते थे। उन्हें न तो खाने-पीने की सुध रहती थी और न सोने-उठने की। फल यह हुआ कि शरीर की ओर ध्यान न दिया जा सका और वह कमज़ोर होता चला गया।

डाक्टर के मना कर देने पर रामन के संबंधी बड़े परेशान हुए। पर रामन ने इसकी तनिक भी चिंता न की। उन दिनों एक ही सरकारी महकमा ऐसा था जिसके कम्पिटीशन वाले इम्तहान भारत में होते थे और जिसके लिए विदेश जाने की ज़रूरत न थी।

कौन सा महकमा था वह?

वह था फाइनेंस का महकमा।

रामन ने जनवरी में एम.ए. का इम्तहान दिया था और फरवरी में ही यह कम्पिटीशन होने वाला था। विषय इसके भले ही भौतिक शास्त्र से कठिन न थे, पर रामन के लिए नए ज़रूर थे। साहित्य, इतिहास, राजनीति और संस्कृत आदि का अध्ययन आवश्यक था।

यह बात सच है कि कठिनाइयां आदमी का रास्ता नहीं रोक सकतीं। हाँ, उसमें साहस और लगन की कमी नहीं होनी चाहिए। रामन ने भी निश्चय कर लिया कि इस कम्पिटीशन में बैठूंगा और सफल होकर दिखाऊंगा।

कम्पिटीशन में बैठने में एक दिन बाकी था कि रामन को तार मिला कि एम.ए. की परीक्षा में वह विश्वविद्यालय भर 8 में प्रथम आए हैं।

अब क्या कहना था! उनका उत्साह और भी बढ़ गया। मन ही मन सोचा कि जब मैं भौतिक शास्त्र जैसे कठिन विषय में इतने अधिक नंबर ला सकता हूं तो, प्रयत्न करूं तो, फाइनेंस विभाग की इस प्रतियोगिता में भी सर्वप्रथम आऊंगा। और यह विश्वास ही उन्हें इसमें भी सर्वप्रथम लाया। उन्नीस वर्ष से कम उम्र में ही रामन भारत सरकार के फाइनेंस विभाग में डिप्टी डाइरेक्टर जनरल के पद पर पहुंच गए।

जानते हो उन्हें कहाँ भेजा गया? उन्हें भेजा गया कलकत्ता, जून 1907 में। कहाँ से चले थे, किधर को चले थे—और जा पहुंचे कहाँ! पर क्या यह लाचारी थी या बेबसी—या फिर हमारे खोखले समाज का दोष? खैर जो कुछ भी हो, इन्सान एक बार उनके आगे सिर झुकाकर भी बाद में अपनी राह निकाल ही लेता है।

लड़का नौकरी पर लगा नहीं कि मां-बाप को उसके विवाह की चिंता सताने लगती है। दक्षिण भारत में तो विवाह और भी जल्दी कर दिए जाते थे। पर रामन अब तक किसी तरह बचे हुए थे। आखिर कितने दिन बचते।

उनका विवाह हुआ श्री कृष्णस्वामी अच्यर की पुत्री से। वह मद्रास के समुद्री विभाग में चुंगी के सुपरिंटेंट थे। खानदान से कुलीन थे। रामन की इनकी बराबरी न थी। पर कृष्णस्वामी की पत्नी ने होनहार रामन को ही अपना भावी दामाद मान लिया था, और जब रामन को अच्छी नौकरी मिल गई तो श्री अच्यर उनसे अपनी पुत्री का विवाह करने को राजी हो गए।

पर श्री अच्यर का राजी होना ही काफी न था, कट्टरपश्ची ब्राह्मणों ने विवाह का विरोध किया और उसमें सम्मिलित नहीं हुए। किंतु किसी ने उनके विरोध की चिंता न की और सुधार चाहने वाले बड़े-बड़े लोगों ने विवाह में शामिल होकर वर-वधू को आशीर्वाद दिया।

नौकरी भी बढ़िया लग गई और अच्छी पत्नी भी मिल गई। अब और क्या चाहिए! बहुधा दुनिया के लोग यह सब पाकर ही संतोष कर लेते हैं। फिर सारी उमर और न कुछ सोचते हैं और न करते हैं। दफ्तर से घर और घर से दफ्तर—बस यही बेमतलब की चक्की।

पर रामन ये दोनों चीजें पाकर भी प्रसन्न नहीं थे। उन्हें तो जिस चीज़ की तलाश थी, जो उन्हें भाती थी, वह अब तक न मिली थी। इसी से वह प्रायः उदास रहते थे।

किंतु जैसा पहले कह चुका हूं, जिन खोजा तिन पाइयां।

वह एक दिन अपने दफ्तर के बाद ट्राम से स्यालदा अपने घर जा रहे थे कि उन्होंने रस्ते में 'भारतीय विज्ञान परिषद्' का बोर्ड देखा और घर की सुध-बुध भूल वहाँ उत्तर पड़े। सीधे जा पहुंचे उस विज्ञान परिषद् भवन में।

सौभाग्य से उस समय परिषद् की बैठक हो रही थी और सर आसुतोष मुखर्जी जैसे विद्वान वहाँ मौजूद थे। रामन ने उस समय तो केवल मंत्री से ही झेट की, और समय पर जाकर उन्हें विदेशी पत्रिकाओं में प्रकाशित विज्ञान संबंधी अपने मौलिक लेख दिखाए। इन लेखों को देखकर मंत्री महोदय मुग्ध हो उठे।

अनन्यास रामन जैसा होनहार वैज्ञानिक पाकर परिषद् धन्य हो उठी। रामन भी अपने आपको अतीव भाग्यशाली मानने लगे। आखिर मन की साध पूरी हुई।

अब क्या था! जब भी समय मिलता वह परिषद् में जाकर नए-नए परीक्षण करने लगते। इतनी बड़ी नौकरी पर न आराम और न अफसरी बू। इसी लगन और खोज का परिणाम था कि परिषद् में पूरे साधन न होते हुए भी रामन ने कई आश्चर्यजनक आविष्कार किए—जिनसे उनकी ख्याति भारत से बाहर, इंग्लैण्ड और अमरीका तक पहुंची और वहाँ के लोग भी इस भारतीय वैज्ञानिक का लोहा मानने लगे। कलकत्ता के प्रमुख वैज्ञानिक सर आसुतोष मुखर्जी और सर गुरुदास बनर्जी तो इनको अपने पुत्र की तरह प्यार करते थे।

पर यह सिलसिला अधिक दिनों तक न चल पाया और इनकी बदली रंगून की हो गई। परिषद् छूट गई। हाँ, विज्ञान का मोह न छूटा। रंगून में नए-नए प्रयोग और खोज करने का मौका न मिलता। हाँ, विज्ञान संबंधी किताबों को पढ़ते रहते।

विज्ञान संबंधी बातों से तो रामन को इतना लगाव था कि इनके आगे वह दूसरी सब चीजें भूल जाते और किसी बात की परवाह न करते।

बात रंगून की है। एक दिन उन्हें पता चला कि पास के किसी स्थान के स्कूल की प्रयोगशाला के लिए साइंस की नई-नई चीजें आई हैं। इस समाचार ने रामन को बेचैन कर दिया। उनके मन में इन्हें देखने की इच्छा जाग उठी। और आखिर अपनी पत्नी को बिना कोई सूचना दिए ही वह आधी रात को घर से निकल पड़े और भोर होते-होते चीजें देखकर लौट आए।

रंगून प्रवास के दौरान ही इनके पिता की मृत्यु हुई। तब रामन छः महीने की छुट्टी लेकर मद्रास आए। यहाँ आकर भी वह विज्ञान से विमुख न हुए। प्रेसिडेंसी कालेज की प्रयोगशाला में वह दिन-दिन भर प्रयोग करते रहते।

छुट्टियों के बाद उनका नागपुर को तबादला हो गया। यहाँ उन्होंने अपने घर पर ही प्रयोगशाला बनाई और उसमें काम करते रहे। शायद कुछ लोग यह समझें कि वैज्ञानिक, दार्शनिक अथवा कवि लोग लापरवाह होते हैं। पर, कम से कम रामन के बारे में यह बात नहीं कही जा सकती। मनुष्य का कुछ भी शौक हो, परन्तु जो कार्य उसे सौंपा गया हो, उसे बखूबी करना चाहिए।

हम तुम्हें बता चुके हैं कि रामन अपना काम लगन और मेहनत से पूरा करते थे। यही बात वह अपने साथ काम करने वालों से भी चाहते थे। परिणाम यह हुआ कि साथ वालों को बुरा लगा।

फिर?

फिर यही कि लोगों ने रामन विरोधी प्रचार शुरू किया और अफसरों से शिकायत की। चोरी और ऊपर से सीनाजोरी इसी को कहते हैं।

पर जब बड़े अफसर ने जांच की तो मामला उल्ल्य मिला। फल यह हुआ कि रामन के कामों को उन्होंने न सिर्फ ठीक पाया, वरन् उनके काम को देखकर दंग रह गए।

अपने आप, बिना मांगे उन्होंने रामन को प्रशंसा-पत्र लिखकर दिया।

जरा सोचो तो, क्या हालत हुई होगी छूटी चुगली करने वालों की!

और इसके बाद रामन को एकाउण्टेण्ट जनरल बना दिया गया और 1911 के नवम्बर महीने में उन्हें कलकत्ते भेजा गया। वर्षों के बाद फिर अपनी बिछुड़ी परिषद् में काम करने का मौका मिला! रामन की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। इस बार रामन ने यहाँ लगभग सात साल काम किया।

इस दौरान रामन ने ढेरों प्रयोग किए, और शब्द के संबंध में अनेक ग्रंथ लिख डाले। ध्वनि विज्ञान के वह प्रकांड पंडित माने जाने लगे।

किसी बात के लिए अनुराग इसी बात से झलकता है कि मनुष्य उसके लिए क्या कुर्बानी करता है।

आज भारत के लोग सरकारी नौकरी के लिए मारे-मारे फिरते हैं। परंतु रामन ने इतनी बढ़िया नौकरी, इतनी अच्छी तनखाह और सरकार में इतने मान-सम्मान को विज्ञान के प्रेम पर कुर्बान कर दिया, निछावर कर दिया।

उन दिनों कलकत्ता में सर तारकनाथ पालित, डॉ. रासबिहारी घोष और सर आसुतोष मुखर्जी जैसे बड़े-बड़े विद्वान व सुधारक थे। विज्ञान के विकास के लिए इन सबने मिलकर कलकत्ते में एक साइंस कालेज खोला। कालेज तो 9



खुल गया पर उन्हें भौतिक विज्ञान पढ़ाने के लिए कोई अच्छा प्रोफेसर दिखाई न दिया। भौतिक विज्ञान पढ़ाए तो कौन? अब श्री मुखर्जी का ध्यान रामन की ओर गया। पर उससे बात करने की हिम्मत न हुई।

तुम पूछोगे हिम्मत क्यों नहीं हुई?

बात यह है कि उनका विचार था कि शायद रामन इतनी अच्छी सरकारी नौकरी छोड़कर साइंस कालेज में आना पसंद न करें।

पर रामन को उन्होंने अच्छी तरह समझा न था। रामन तो विज्ञान के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने को तैयार थे। वह जानते थे कि विदेशी हुकूमत के नीचे सरकारी नौकरी एक चीज़ है और विज्ञान की सेवा दूसरी चीज़; सरकारी नौकरी में रहते हुए मैं विज्ञान की सेवा न कर सकूँगा।

उन्हें जब श्री आसुतोष की बात का पता चला तो उन्होंने फौरन सरकारी नौकरी छोड़ दी।

अब एक और दिक्कत सामने थी। दिक्कत यह कि साइंस कालेज में यह आवश्यक समझा जाता था कि जो भी व्यक्ति भौतिक विज्ञान पढ़ाने आए, वह किसी विदेशी अर्थात् यूरोपीय विश्वविद्यालय में पढ़ा हुआ हो और वहां की डिग्री उसे प्राप्त हो। रामन को अभी विदेश जाने का मौका तक नहीं मिला था, डिग्री की बात तो दूर थी।

आज भी हम यूरोप की डिग्री को बड़ा मानते हैं। पर रामन उस समय भी इस शर्त को अपमानजनक मानते थे।

10 और शर्त अपमानजनक थी भी।

जो भी हो, आखिर रामन पर से यह शर्त हटा ली गई और जुलाई 1917 में वह कलकत्ता विश्वविद्यालय में भौतिक विज्ञान के प्रोफेसर बन गए।

अब क्या था। रामन को मनचाहा काम मिल गया। वह दिन-रात उसी में मग्न रहने लगे। और उनकी ख्याति और लगन के कारण भारत भर से विज्ञान के विद्यार्थी खिंच-खिंच कर कलकत्ता आने लगे।

रामन की प्रतिभा और लगन को देखकर ही प्रिसिपल आर्चीबाल्ड ने कहा था, ‘किसी विश्वविद्यालय की शोभा उसकी बड़ी-बड़ी आलीशान इमारतें नहीं, वरन् वहां पढ़ाने वाले गुरु और पढ़ाने वाले शिष्य होते हैं।’

इसके बाद 1921 में पहली बार वह विदेश गए—कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि के रूप में। लंदन में ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के विश्वविद्यालयों की एक बड़ी सभा होने वाली थी। कलकत्ता विश्वविद्यालय का बड़ा नाम था। रामन विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि चुने गए और लंदन गए। वहां इनकी अपनी नई खोजों के बारे में इनके भाषण सुनकर लोग दंग रह गए। इसके बाद तो इनके विचार जानने के लिए इन्हें अनेक बार विदेश बुलाया गया। विदेशों में इनका सम्मान होने लगा।

इंगलैण्ड, अमरीका, सोवियत संघ और यूरोप का शायद ही कोई देश बचा हो जहां रामन न गए हों और जहां की विज्ञान संस्थाओं ने इनका स्वागत न किया हो, इन्हें उपाधियां न दी हों और अपने देश की सबसे उच्च और

चक्रमुक

नवम्बर, 1988

सम्मानित विज्ञान संस्थाओं का सम्मानित सदस्य इन्हें न चुना हो।

तालाब में लहरें उठती तो सभी ने देखी होंगी।

प्रकाश के संबंध में भी बात ऐसी ही है। पर प्रकाश फैलता कैसे है?

प्रकाश तो वहाँ भी फैलता है जहाँ हवा न हो।

इसका कारण क्या है?

पहले लोग कहते थे कि प्रकाश ईंधर नामक एक व्यापक पदार्थ के सहरे फैलाता है। पर आज यह बात पुरानी हो गई। आज उसका कोई महत्व नहीं। कारण यह कि इस संबंध में और अनेक महत्वपूर्ण खोजें हो चुकी हैं।

रामन की खोजों का मुख्य विषय प्रकाश है। उन्होंने इस संबंध में नासिद्धान्तों की खोज की और उन्हें सिद्ध करके दिखाया। उन्होंने कहा कि तरल और पारदर्शी वस्तुओं में छितरकर प्रकाश का रंग बदल जाता है।

सिद्धांत तो उन्होंने खोज निकाला। पर वैज्ञानिकों के सामने इसे सिद्ध करने में उन्हें चार वर्ष लग गए। 1928 में इसी को सिद्ध करने के लिए उन्होंने पारे के दीपक का इस्तेमाल किया। इससे यह सिद्ध हो गया कि जब-जब अलग-अलग वस्तुओं द्वारा प्रकाश छितराया जाता है तब-तब परदे पर प्रकाश की रेखाएँ भी भिन्न-भिन्न तरह की पड़ती हैं।

प्रकाश का यह रंग-परिवर्तन वैज्ञानिक संसार में 'रामन प्रभाव' के नाम से विख्यात है।

इसी तरह शब्द और ध्वनि के बारे में भी उन्होंने कई नए सिद्धांत खोज निकाले। इस काम के लिए उन्होंने कई नए यंत्रों का आविष्कार भी किया।

रामन के घर में संगीत के वाद्ययन्त्र थे। पिता को उनके बजाने, उनमें रस लेने, का शौक था। रामन को 'ध्वनि' के अध्ययन का शौक पैदा हो चुका था।

रामन ने भारतीय वाद्ययन्त्रों—वीणा, मृदंग और तबला आदि की ध्वनियों का बारीकी से अध्ययन किया। उनके बारे में सोचा, अनुशीलन किया और अनेक परीक्षण किए।

बरसात में इंद्रधनुष तुमने देखा ही होगा!

रामन ने हलके बादलों से पैदा होने वाले रंगों और इंद्रधनुष के रंगों की भी जांच की। उन्होंने बताया कि प्रकाश तरल और पारदर्शक चीजों में से गुजरकर ही छितराया नहीं जाता, वरन् स्फटिक जैसे ठोस पदार्थों में से भी अणुओं की गति के कारण प्रतिक्षिप्त होता है।

आज का युग परमाणु-युग है और परमाणु के संबंध

में अनेक खोजें हो रही हैं। श्री रामन के सिद्धांतों से इसमें और भी आसानी होगी। किसी भी पदार्थ के अणुओं की गणना कर सकना संभव होगा। इस तरह उस पदार्थ की बनावट का वास्तविक ज्ञान हो सकेगा।

रामन की खोज 'रामन प्रभाव' का इतना सम्मान हुआ कि 1930 में इन्हें सर्वोत्तम वैज्ञानिक खोज पर मिलनेवाला संसार भर में सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार—नोबल पुरस्कार—मिला। एशिया भर में किसी को भौतिक विज्ञान पर पुरस्कार मिलने का यह पहला अवसर था।

रामन प्रभाव की भी एक कहानी है।

1921 में रामन जब विदेश गए तो भूमध्य सागर में उनका जहाज़ जा रहा था। रामन डैक पर खड़े थे। उनकी नज़र पानी पर पड़ी और वहाँ अटक कर रह गई।

अटक कर?

हाँ, पर वहाँ कोई मगरमच्छ नहीं था; कोई ह्लेल या नर ह्लेल भी नहीं।

वहाँ थीं पानी की तरंगे और उनका गहरा नीला रंग।

रामन ने सोचा, क्या बात है कि बंगाल की खाड़ी का पानी गहरे नीले रंग का नहीं; वह सफेदी-मायल है और यह इतना नीला। पानी दोनों का है समुद्र का ही।

सात साल रामन ने ये रहस्यमयी गुत्थियां सुलझाने में लगा दिए। और अंत में वे ही निर्णय 'रामन प्रभाव' के नाम से विख्यात हुए। इनके प्रकाशित होने के बाद तो संसार भर के वैज्ञानिकों का ध्यान उधर गया और कुछ ही दिनों में 600 से अधिक वैज्ञानिकों ने इस संबंध में और खोजें कीं।

संसार प्रसिद्ध नोबल पुरस्कार मिलने के बाद तो रामन पर सम्मानों, पुरस्कारों, और डिग्रियों की बौछार होने लगी। ब्रिटिश सरकार ने 1929 में 'सर' का खिताब देकर सम्मानित किया। अनेक स्थानों से उन्हें डाक्टरेट की उपाधियां मिलीं।

सन् 1943 में बंगलौर के पास उन्होंने अपना संस्थान खोला। संस्थान का नाम है—रामन इंस्टीट्यूट। पेड़-पौधों से घिरी इस इमारत में वे अंत तक कार्य करते रहे। वृद्धावस्था में भी रामन को रंग-बिरंगी चीज़ें आकर्षित करती थीं। और इनमें छिपे रहस्य खोजने को वे हमेशा तत्पर रहते। 20 नवंबर 1970 को उनकी मृत्यु हो गई।

युवा वैज्ञानिकों को उनकी सलाह थी, "कि चारों ओर देखो, अपने को अपनी प्रयोगशाला में बंद कर लो। विज्ञान का सार उपकरण नहीं, बल्कि स्वतंत्र सोच-विचार और परिश्रम है।"

□ विश्वमित्र शर्मा 11

मेरा पुन्हा

अपने अपने रास्ते

एक बार में अपनी दुकान पर बैठा था। तभी बस स्टैंड से एक पुलिस स्कूटर पर बैठकर आ रहा था। तो धोके से पुलिस की गाड़ी का चका एक आदमी के पैर के ऊपर चला दिया।

वह आदमी बोला—क्यों तुम गाड़ी भी ठीक से नहीं चला सकते। पुलिस बोला—हमने हड्डेस के थोड़ी चढ़ाई है धोके से चढ़ गई। वह आदमी

बोला—इतनी सारी सड़क पड़ी है इतने आदमी जा रहे हैं उनके ऊपर नहीं चढ़ाते बना। बस मैं ही मिला। पुलिस वाला बोला तुम ही तो बीच सड़क पर से चल रहे थे। तभी एक आदमी आया और बोला—चलो भाई तुम अपने घर जाओ और तुम भी अपने घर जाओ। वे दोनों अपने-अपने रास्ते चल दिए।

□ इकबाल खान, सातवीं, पिपरिया
(बाल चिरेया में)



संदीप त्रिपाठी, छटवीं, शाहपुर, बैतूल

बंधिया की लड़ाई

सदा हमारे गांव में होती नहीं लड़ाई
कभी कभार जो हत है हल्ला, सबको दिया सुनाय
कुन्ना मुन्ना दो भइया थे, एक दिन उनमें ठनी लड़ाई
देखन को सब दौड़ेँ छोड़ेँ छोड़ेँ कर अपनी पढ़ाई
कुन्ना बोलो मुन्ना कान खोल कर सुन ले आज
बंधिया फोड़ी खेत की तूने, तेरो तो मोड़ा मर जाय
गुस्सा आ गई मुन्ना को उसने लठिया लई निकार
गाली गुप्ता हो रही, मुन्ना करन लगे तकरार

हल्ला सुनके मुकद्दम आये और आये गांव कुट्टवार
सयाने बड़े बहुत से आये, और आये पंच मुख्यार

कुन्ना बोलो सब पंचों से जा अर्जी सुन लो महराज
इसके बंधिया फोड़ी खेत की, इसका गिर्णय दियो कराय
बुलवाये फिर मुन्ना को और पंचों ने दिया हुक्म सुनाय
माफी मांग ले तू कुन्ना से, तेरी खता माफ हो जाय
अभिमानी मुन्ना फिर गरजो, और पंचों की मानी नाय
सब पंचों ने किया फैसला, जात से बन्द दियो कराय
जैसे झगड़ा हुआ गांव में, मैंने तुमको दिया बताय
जो कुछ गलती हुई है इसमें, उसको देना माफ कराय

□ हरनाम सिंह ठाकुर, छटवीं, रानी, पिपरिया
(बाल चिरेया)

खतरनाक स्कूल

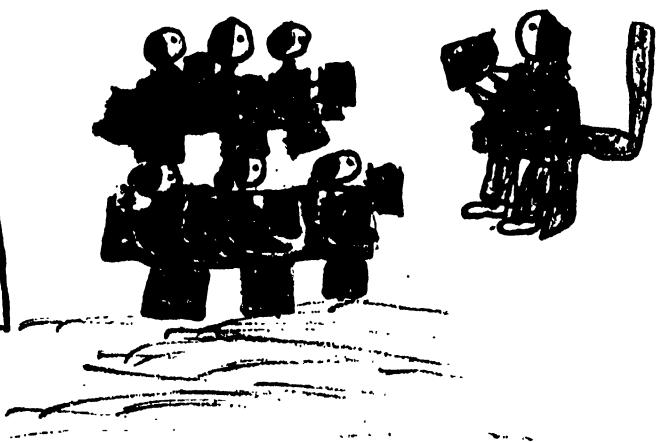
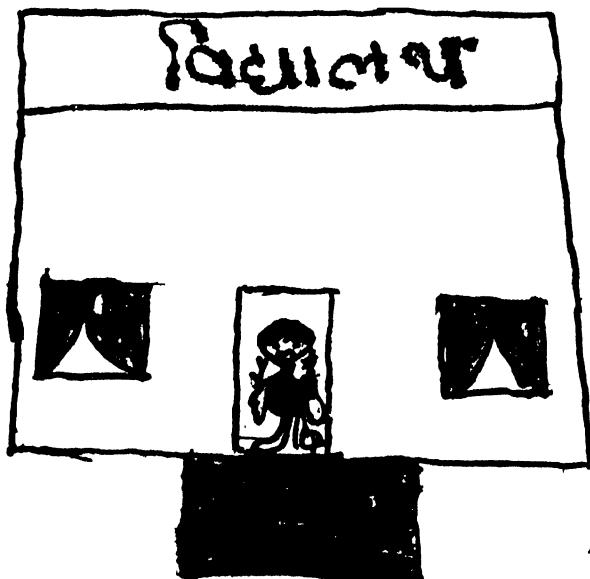
ग्राम गरधा का स्कूल बहुत खतरनाक है। उसमें बालक बालिकाएं पढ़ते हैं। और उसमें एक दीवाल तो ऐसी है जो बहुत फट गई है। और उसमें एक बहुत बड़ी लकड़ी लगी हुई है। और गेड़ा लटक रहे हैं। उसमें बहुत से खपड़ा फोड़ डाले हैं। और गांव वाले गुरुजी से कहते हैं कि इस स्कूल को बनवा दो तो वह गुरुजी कहते हैं कि हमने इतनी दरखास्त भिजा चुके हैं। वह कहते हैं कि बनवा देंगे। दो-तीन साल हो चुके हैं

मगर बनवा नहीं रहे।

यदि उस स्कूल की दीवाल बच्चों के ऊपर गिर जाए तो बच्चे मर जाएंगे। और एक ऐसा चूरिया है जो एक ईंट के बल पर टिका हुआ है। और वह गिर भी नहीं रहा है। बरसात में जब पानी गिरता है तो स्कूल भर जाता है तब वह स्कूल बंद रहता है।

□ हरगोविंद मेहर, गरधा, आठवीं, मछेरा कलां
(आनंदिता)

चें चें पों पों



जब हम घर में रहते हैं तो गिचर-पिचर होता रहता है। हम पांच भाई हैं। पांचों भाई चें चें पों पों मचाते हैं। सबसे छोटा भाई तो बहुत उथम मचाता है। जब हम घर से पाठशाला जाते हैं तो उधर ऐसा ही होता है। जब एक लड़का उस डेस्क पर बैठता है तो उस पर चार लड़के बैठने की सोचते हैं। लेकिन सर नहीं बैठने देते, वे कहते हैं कि इतनी सारी डेस्कें हैं उन पर क्यों नहीं बैठ जाते? लड़के कहते, सर हमको पहली डेस्क अच्छी लगती है। इस कारण हम उसी पर बैठेंगे। सर ने नियम बनाया एक लड़का एक दिन पहली डेस्क पर बैठेगा और फिर वह पीछे बैठेगा। ऐसा नियम सर ने बारी-बारी से बनाया। जब हम बाजार जाते हैं तो एक का धक्का एक को सहना पड़ता है। और गिचर पिचर होता रहता है। इस कारण मैं हर दिन बाजार नहीं जाता, कभी-कभी चला जाता हूं।

□ राजकुमार मालवीया, पिपरिया
(आनंदिता)

साहसी सोमवती

शहडोल के तहसील मुख्यालय पुष्पराजगढ़ से पच्चीस किलोमीटर पूर्व में एक गांव है—जामकछार।

जामकछार लगभग तीन सौ व्यक्तियों की जनसंख्या वाला एक छोटा-सा आदिवासी गांव है। इसी गांव में गरजन गौड़ अपने परिवार के साथ निवास करते हैं।

चार अप्रैल, 86 की रात को लगभग आठ बजे गरजन गौड़ के घर के चार सदस्य कमरे में थे। सोमवती (गरजन की पुत्री) दूसरे कमरे में खाना बना रही थी। लूटा नामक व्यक्ति जलती हुई चिमनी में पीपे से मिट्टी का तेल भर रहा था। एकाएक पीपे ने आग पकड़ ली। आग भड़क उठी। पीपा आग से नाचने लगा। देखते-देखते आग ने विकराल रूप धारण कर लिया। दुर्घटना इतनी आकस्मिक थी कि बीस वर्षीय लूटा की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गई।

सोमवती सहित घर के कुछ सदस्य बाहर आ चुके थे। पर सोमवती का आठ माह का भाई रामप्रकाश और दादी अंदर ही थे। उनका ख्याल आते ही सोमवती साहस बटोरकर, जाम की परवाह न करते हुए कमरे के अंदर चली गई और आग की लपटों से जूझती हुई अपने भाई को सुरक्षित बाहर ले आई। उसने अपनी दादी को भी बाहर लाने में मदद की। इस प्रयास में उसका मुंह और हाथ व पैर झुलस गए और वह बेहोश हो गई। सोमवती की दादी बुरी तरह से जल गई थीं। बाद में अस्पताल में उनकी मृत्यु हो गई।

इस दुर्घटना में चार लोगों की जान गई। जब सोमवती अपनी दादी और भाई को बचाने का प्रयास कर रही थी, उस समय गांव के लोग उस दृश्य को मूक दर्शक की भाँति देख रहे थे।

जान जोखिम में डालकर अदम्य साहस का परिचय देने वाली इस किशोरी को शासन द्वारा जीवन रक्षा पदक से विभूषित किया गया है।

मैंने सोमवती से उसके गांव जाकर बातचीत की।

आपको यह पुरस्कार मिला तो कैसा लगा?

बहुत प्रसन्नता हुई। पर इस बात का दुख भी है कि मैं अपनी बहन, दादी और काम करने वाले दो आदमियों को नहीं बचा सकी। उन्होंने मेरे सामने ही दम तोड़ दिया। वह दृश्य चर्चा होने पर मेरी आंखों के सामने हमेशा उत्तर आता है

14 (सोमवती की आंखें भर आईं)।



सोमवती

सुनिता दुबे

क्या आपने ऐसा सोचा था कि आपको वीरता का पुरस्कार मिलेगा?

ये तो मात्र एक दुर्घटना थी। मैंने पुरस्कार की इच्छा से यह कार्य नहीं किया और न मैं इस पुरस्कार के बारे में जानती थी।

आप जिस वक्त आग में कूदीं आपको डर नहीं लगा?

नहीं मुझे लगा कि जो चल सकते हैं वो तो चलकर आ जाएंगे, पर आठ-नौ माह का रामप्रकाश कैसे आएगा? बस जिस वक्त यह बात दिमाग में आई, मैं आग में कूद गई।

आप कहां तक पढ़ी हैं?

मैं स्कूल तक नहीं गई। मेरे गांव में उस वक्त स्कूल नहीं था, पर मैं पढ़ने की इच्छुक हूँ।

आपकी शादी कब और कहां हुई?

यहां से पांच किलोमीटर दूर लपटी ग्राम में, इसी फागुन में। वे लोग कृषक हैं।

आप भी कुछ काम करती हैं?

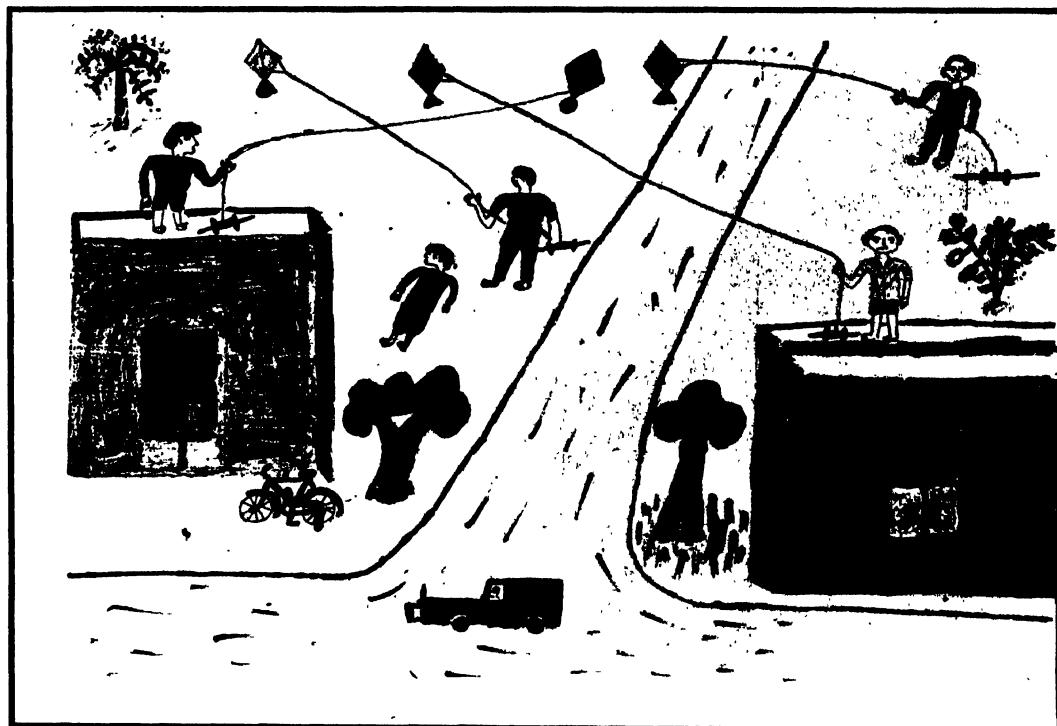
हाँ, पर खेत बगैरा में नहीं जाती हूँ।

आप गांव की महिलाओं के लिए कुछ कहना चाहती हैं?

हमारे गांव की महिलाओं की जो स्थिति है उसमें सुधार किया जाए तथा उन्हें पढ़ने और काम की सुविधा दी जाए।

प्रस्तुति : सुनिता दुबे, पुष्पराजगढ़, शहडोल

ઘ્યારી પતંગ



આનદ કુમાર, ડાચિયા, દર્તિયા

ગિરગિટ-સી બદલતી રંગ
ઉડતી મેરી ઘ્યારી પતંગ!

બાજ જૈસી ગોતા ખાતી
પલક ઝાપકતે ઊપર આતી!

મન મેં છાઈ નહી ઉમંગ
ઉડતી મેરી ઘ્યારી પતંગ!

ડોરી કી યહ કરતી સવારી
ખગ-સી નભ મેં લગતી ઘ્યારી!

અન્ય પતંગોં સે કતરાતી
અવસર દેખ કાટ ગિરાતી!

આકાશ મેં કરતી હુડંગ
ઉડતી મેરી ઘ્યારી પતંગ!

□ આનદ ભારસાકલે, જાબલપુર



छोटी चिड़िया

बिरज को रह-रह कर दादा पर गुस्सा आ रहा था । ... यह भी नहीं देखते कि लड़के का जगने का 'टैम' हुआ भी या नहीं । बस मुर्गा बोला कि खुद उठ गए । मां चाकी शुरू कर देती हैं और अपुन बैलों का चारा-पानी । ठीक उजाला होने भी नहीं पाता कि लग जाते हैं मुझे जगाने रोज, 'उठो बेटा, चिड़िया जगने वाली हैं । खेत को चौपट कर देंगी । जा खेत पर जल्दी जा ।' अरे मुर्गों और चिड़ियों को काम भी क्या है जो उन्हें मीठी नींद आए । बस दिन भर दूसरों के खेतों-घरों में दाना चुग लेना और मजे करना । यहां तो कितने काम करने पड़ते हैं । कहीं दादा खेतों पर स्गेद देंगे, कभी मां दुकान पर जिंस लेने भेजती रहेंगी । दिन भर में पांच पिराने लगते हैं ।...

...यों तो बड़ा दुलार करेंगे - हमारा बिरज बड़ा सयाना है, बीर-बहादुर है । गुस्सा हो जाऊंगा तो रेवड़ी दिलाएंगे, गोली दिलाएंगे पर अपना काम पड़ता है तभी । मेरे मन की कहां होने देते हैं । उस दिन बाग में कितनी सुंदर-सुंदर तितलियां उड़ रही थीं । एक नहीं पकड़ने दी । बोले, 'अरे...रे ...मर जाएगी बेचारी...', जैसे मैं कुछ जानता नहीं, मेरे मन में दया नहीं । एक बार रानी बर्र पकड़ लाया था, जगू के खेत से । कैसी सुंदर थी लाल चिकने पंख थे, हरी चमकती गर्दन... सिर... मां ने छुड़वाकर ही दम लिया । वो समझी मैं मार डालूंगा ।

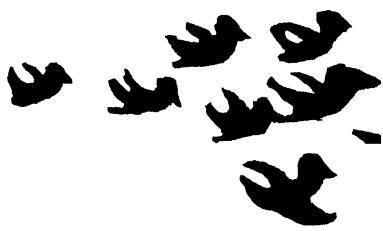
16 अरे... उसे प्रिखिलाने के लिए बेरी के कितने पत्ते इकट्ठे कर लिए

थे, छोटा-सा लकड़ी का संटूक भी उसका घर बना दिया था । पर मुझे तो नादान समझते हैं । अरे, अब क्या मैं बच्चा हूं पूरे दस साल का हुआ जा रहा हूं । फिर भी लगे रहेंगे पीछे...!

...अभी ऐसा बढ़िया सपना आ रहा था कि झकझोर कर जगा दिया और रगैद दिया । न दातौन न कलेवा । 'चिरैया नाश कर देंगी', जैसे चिड़ियों को बस इनका ही खेत मिलेगा चुगाने को । अच्छा होता मैं मुन्नी से छोटा होता । तब सारे काम मुन्नी को ही करने पड़ते कि नहीं । रानी जी को कोई जगाता नहीं ।...

सर र...र... चिड़ियों का एक झुंड बिरज के सिर से गुजरा । वह समझ गया कि ये ज्वार-बाजरे के दूध भरे कच्चे दानों पर धावा बोलने जा रही हैं । उसने जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाए । दूसरे खेतों में उससे पहले ही, रखवाले आ चुके थे । उसने आसपास से मिट्टी के ढेले बीने और मचान पर जा पहुंचा । और जोश में भरकर एक ढेला गोफिन में रखा, जोर से घुमाकर फेंक दिया । ढेला सनसनाता बाजरे के पौधों में से होता हुआ उस पार जा गिरा । फुर्र...र... एक साथ पचासों चिड़ियां खेत में से उड़ी ।

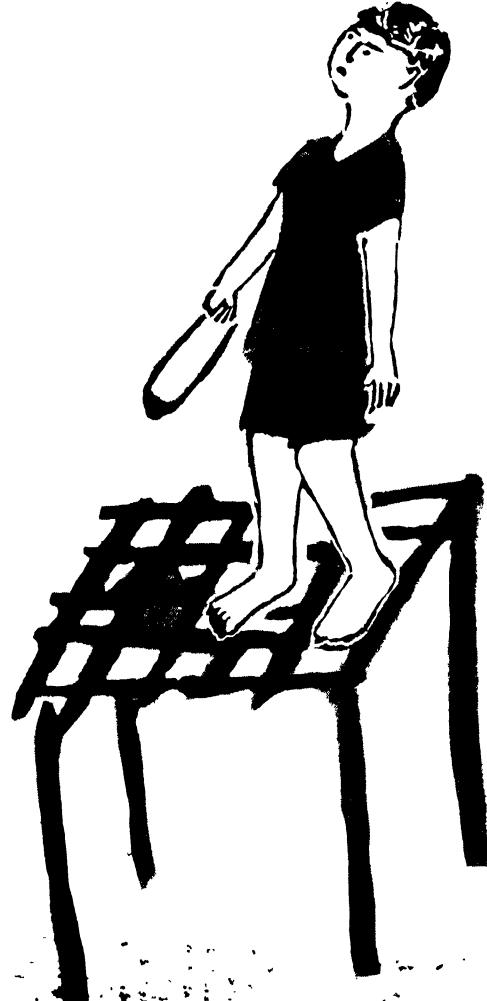
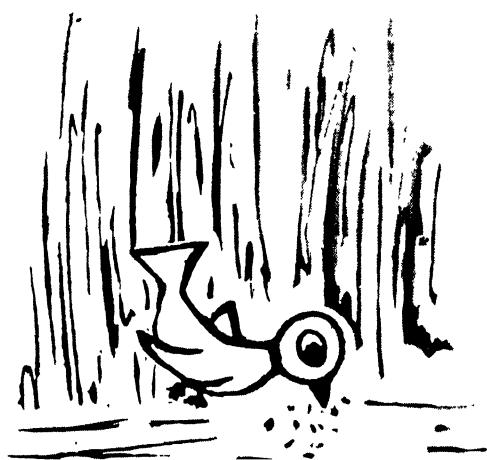
...दादा ठीक कहते थे कि चिरैयां सब चौपट कर देंगी । आ जाती हैं इकट्ठी ही हमारे खेत में । क्या इन्हें कहीं और कुछ नहीं मिलता, सो झुंड की झुंड यहीं टूट पड़ी हैं ।



निकम्मी कहीं कीं। जोतें-बोएं तब पता चले कैसे पैदा होता है। मुफ्त का मिल जाता है न! अब आना खेत में!... वह ढेले पर ढेले फेंकने लगा।

दूर किसी मचान से रेहट की बाल्टी पीटने और साथ ही हो... हो... की आवाज़ आ रही थी। बिरज भी पास रखा दूटा पुराना कनस्तर बजाने लगा। गाने लगा... 'ओऽह हरी... हरी बालें।' आम के बाग के पीछे से सूरज झांकने लगा, लाल-सुनहरा। घास और पत्तों पर मोती झिलमिलाने लगे। दूर-दूर तक खुला आंसमान, जिसमें कितने ही पखेरु चहकते जा रहे थे। गने के खेत से मीठी-सी महक आ रही थी। सर्वेर की ठंडी हवा में बाजरे के पौधे झूल रहे थे। बिरज को अपने खेतों की शोभा पर बहुत प्यार आया। सांझ को जब सूरज पहाड़ियों के पीछे जाता है। पंछी अपने घरों को लौटते हैं, खेतों की हरियाली गहरा जाती है तब भी बिरज को अपने खेत बहुत अच्छे लगते हैं। क्वांर में तो वैसे भी आसमान धुला-धुला-सा लगता है। धूप नरमाई से चमकने लगती है। नुदी-किनारे का कांस फूल उठता है। पेड़, पत्ते, घास, ओस्स से नहा जाते हैं। बिरज को सब कुछ बहुत अच्छा लगता है।

ध्यान में डूबे बिरज को पता भी न चला कि कब धीर-धीरे आकर चिड़ियों ने बाजरे की बालों पर अपना आसन जमा लिया है। चहचहाटों से खेत गूंज रहा था। उसने फुर्ती से लगातार चार-पांच ढेले फेंके। खेत फिर खाली हो गया चिड़ियों से। बिरज ने ध्यान से देखा कि काली आंखों और काली कण्ठी वाली यह पीली छोटी-सी चिड़िया मचान के पास



ही आगाम दूरज्योति दोने निकालने में लगी है। शायद ढेले की मार इस तक नहीं जा रही, इसीलिए रानी जी मजे में खा रही हैं बिरज ने सोचा और निशाना साधकर कंकड़ फेंका। कंकड़ उसकी चोंच के ऊपर लगा, पौधा झनझना गया और चिड़िया उड़ गई। पर इधर-उधर उड़ने का बहाना करती रही। कभी पेड़ पर बैठती, फिर उड़कर पास के खंभे पर। और फिर बिरज की आंखों में धूल झांकती-सी एक पौधे पर आ बैठी। पौधे पर झूलती रही और फिर चुगने लगी।... उफ बड़ी बेशरम चिड़िया है। शायद अभी सबक नहीं मिला इसे।... उसने फिर साध कर कंकड़ फेंका। अब की उसकी पीठ पर लगा। शायद कुछ चोट लग गई जो चीं चीं कर पंख फड़फड़कर उड़ी।

...अब नहीं आएगी। ...बिरज ने सोचा। पर यह क्या थोड़ी देर बाद वही चिड़िया हौसले बढ़ाती फिर एक पौधे पर आ बैठी। अब की बार बिरज ने उसे उड़ाया नहीं। ...क्या बात है जो उड़-उड़ कर यहीं आ जाती है, कहीं दूर नहीं जाती। देखना चाहिए कितनी देर चुगी। ...थोड़ी देर बाद वह स्वयं उड़ गई और पास के पेड़ की एक डाली पर जा बैठी। बिरज 17



ने ध्यान से सुना। चिड़िया के पहुंचते ही कई नहीं आवाजें चीं... चीं... चीं... एक साथ उभर उठी हैं। वह लपककर मचान से उतरा और पेढ़ के नीचे गया। एक सुंदर घोंसले के द्वार पर तीन-चार चाँचें खुली दिखाई दीं चीं... चीं... चीं... चीं... चिड़िया बारी-बारी से उनकी चाँच में दाना दे रही थी। उनकी चीं... चीं... ज्यादा तेज़ हो गई। एक-दूसरे से पहले और ज्यादा पाने की होड़ में बैंग-एक-दूसरे को धकिया भी रहे थे शायद।

बिरज का जी हलस उठा। ये तो हमारी ही तरह झगड़त हैं। मुझी कहती है, 'मां तुमने बिरज को ज्यादा दिया है मैं और लूंगा।' ... 'नहीं तो... मां देखो न इसने अपना आधा हिस्सा तो खा लिया है... मुझे और चईये...' और फिर झगड़ा। बिरज ने खुश होकर ताली बजाई। उसे लगा कि चिड़िया भी उन्हें मां की तरह समझा रही है, 'तसल्ली रखो मेरे नहे-मुनो! खूब खा लेना पेट भर! नीचे घास के खेत में ही भण्डार है दूधिया दानों का। भटकने की ज़रूरत नहीं।' फिर उसे लगा कि चिड़िया अफसोस भी कर रही है, 'एक मुसीबत है। वह छोकरा है ना छोटा-सा, जमकर बैठने भी नहीं देता। बार-बार ढेला मारकर भगा देता है। लाना इतना सरल भी तो नहीं।'

बिरज को अपने आपसे ही शर्म हो आई। म्लानि हुई। ... कितना बुरा किया मैंने... बेचारी को बेकार उड़ाता रहा। मुझे क्या पata कि अपने नहे-नहे बच्चों के लिए बार-बार आ रही है। उनके लिए ही तो बेचारी बार-बार भटकती है। पीठ पर ढेले झेलती है। बच्चों का पेट भर देगी, तब खुद खा पाएगी बेचारी... च्च... च्च...', बिरज ने दुख प्रकट किया।

...मां हम दो के लिए कितनी चिंता करती हैं, बिरज को

18 दूध नहीं मिल पाया। मुझी भूखी सो गई। कपड़े नहीं हैं। रोटी

के साथ साग नहीं हैं। फिर यह तो बेचारी चार बच्चों को पाल रही है। मुंह अंधेरे निकलती होगी दाने की तलाश में, तब कहीं भर पाती होगी नन्हों का पेट। अच्छा है हमारा खेत इनके घोंसले के पास ही है। ... बिरज का मन भारी हो गया। ... बेकार ही उड़ाते हैं इन्हें हम! अरे छोटा-सा मुंह, छोटा-सा पेट; कितना खा पाएंगी? आखिर कहीं से अपना पेट तो भरेंगी ही?

कहीं खेती, मजूरी तो है नहीं इनकी। यही बाग-बगीचे, खेत-खलिहान ही तो हैं उनके भोजन का साधन। फिर क्या इनसे हमारे खेतों, बगीचों की, आसमान की, पेड़ों की शोभा नहीं बढ़ती? इसके बदले हम खाने दें तो क्या हरज है? बच्चे बाट जोहते होंगे कि मां कुछ ला रही होगी...!

इन मधुर कल्पनाओं में डूबे बिरज ने ज़रा भी ध्यान नहीं दिगा कि सारा खेत छोटी-छोटी चिड़ियों से भरा है। उसने बीने हुए मारे कंकड़ व ढेले एक और फेंक दिए। और चुपचाप उस चिड़िया को दंखने लगा जो बच्चों को समझा-बुझाकर फिर एक दाने भरी बाल पर। आ बैठी थी। पंख फैले थे, पृष्ठ ऊपर-नीचे हो रही थी। बड़ी लगन, बड़े श्रम से वह दाना मंचित कर रही थी।



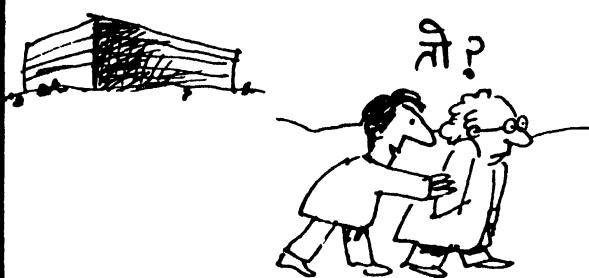
दूर से आती ढोल पीटने की आवाज उसे बड़ी कर्कश लग रही थी। वह बिना आहट किए बड़े प्यार से छोटी चिड़िया का चुगना व चुगना देखता रहा।

सभी चित्र : जया विवेक □ गिरिजा कुलश्रेष्ठ



भाग-तीन

तो क्या ?
यह सब आशाय...
अंची इरादे ...



तुमने तो आँकड़े देख ही लिए...
क्या इस सब का नतीजा
यही है ? ...



कहाँ से आया यह स्कूल ?
क्या यह हमेशा

से रैसा ही था, जैसा
अब है ?
नहीं !

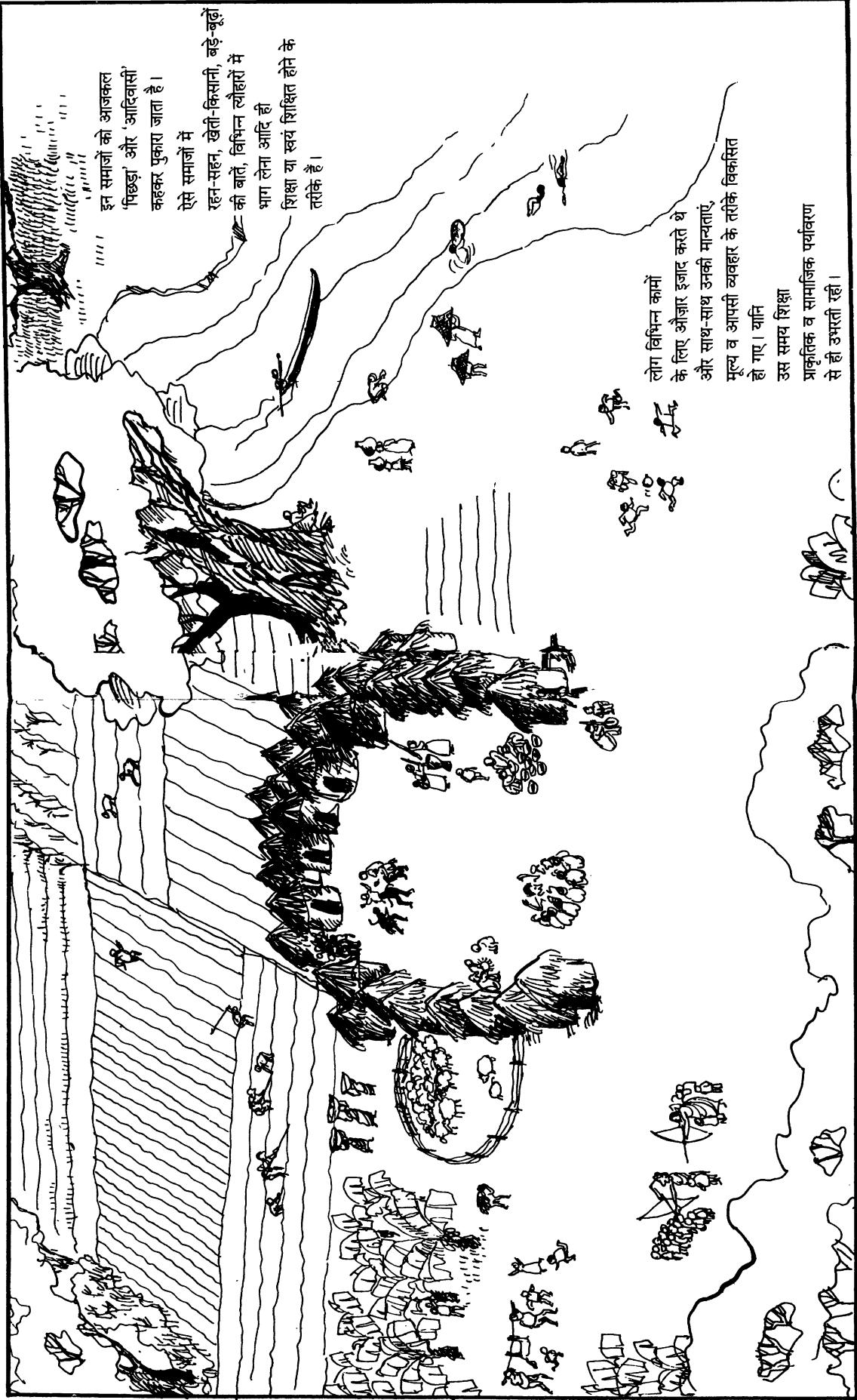


चकमक

नवबन, 1988

शिक्षा, बिना स्कूल के

ऐसे समाज, जिनमें छहन नाम की कोई चीज़ नहीं है,
पहले भी थे और अब भी हैं।



चक्रमंडक

नवरात्रि, 1988

'स्कूल शिक्षक'
जैसा अलग से कोई शिक्षक
नहीं था ।



हर एक वयस्क
या बड़ा ही 'शिक्षक' था ।
बच्चे व अन्य
लोगों के अनुभवों से सीखते थे

वे 'करके' सीखते थे ।
इस तरह ज्ञान, मेहनत व जीवन
एक दूसरे से
अलग-अलग नहीं थे ।

वहां कोई
ज्ञान का वृक्ष अलग से नहीं था,
बल्कि ज़िदगी के वृक्ष
की शाखाओं पर ही
ज्ञान खिलता था ।

'सभ्य' स्कूल



मध्यकालीन समय में ऐसा बदलाव आया कि शिक्षा-स्कूली व्यवस्था का उत्पादन बन गई और वह भी यूरोप में!

जिस तरह से अपने देश में प्राचीनकाल में समाज का एक वर्ग, यानि ब्राह्मण, ज्ञान का भंडार माना जाता था, उसी तरह यूरोपीय समाज में सिखाने वाला एक वर्ग खड़ा हो गया। इस वर्ग में आमतौर पर पादरी थे। ये लोग ज्ञान और जानकारियों को एक बनावटी वातावरण में फैलाने में माहिर बन गए। यह बनावटी वातावरण रोजमर्मा की ज़िंदगी और वयस्कों से दूर हो गया। यही थी शुरूआत स्कूली व्यवस्था की।

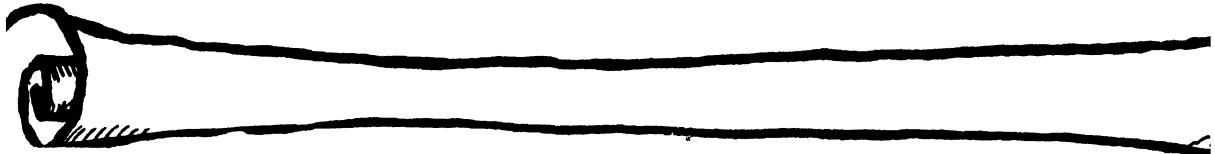
ज्यों-ज्यों सदियां बीतती गईं, यह स्कूल धनवानों के लिए रिजर्व होते गए।

जो 'बाकी' थे, यानि - किसान, मज़दूर या अन्य सर्वहारा - वे अपने जीवन के संघर्ष से ही शिक्षित होते रहे।

'सभ्य' लोगों के इस स्कूल में पुरानी परम्पराओं और नैतिक मूल्यों पर खूब ज़ोर दिया जाता था। कुछ हद तक बोलने में माहिरी व फिलासफी पर भी ज़ोर था। वैज्ञानिक सोच-समझ, जिससे बदलाव आने का डर था, भाषणबाजी और लेटिन भाषा से कम महत्व की थी। आखिर यही दो चीज़ें तो ऐसी परम्परा की प्रतीक थीं, जिसके अंतर्गत दुनिया और उसके समाज को कभी न बदलने वाला माना जाता था।

ऐसे 'सभ्य' समाज के लिए पढ़ना-लिखना अपनी तथाकथित 'सभ्यता' को कायम रखने का एक ज़रूरी हथियार बन गया।

सन् 1802 में डेस्ट्रॉट डी ट्रेसी नाम के एक साहब ने शिक्षा के इस बंटवारे पर एक टिप्पणी की। इस टिप्पणी को पढ़ते हुए लगता है जैसे यह हमारी वर्तमान शिक्षा नीति की भविष्यवाणी थी।



जनाब डेस्ट्रॉट ने लिखा, “किसी भी सभ्य समाज में यह अनिवार्य है कि लोगों के दो वर्ग हों। एक वर्ग मेहनत से अपना जीवन-यापन करने वालों का और दूसरा उनका जो सम्पत्ति या दिमागी श्रम से आय उत्पन्न करते हैं। पहले को हम श्रमिक वर्ग कहते हैं और दूसरे को मैं शिक्षित वर्ग कहूँगा।

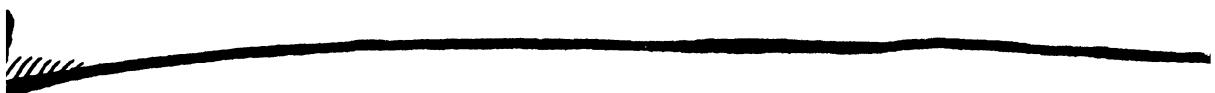
श्रमिकों को तो ज़ल्द से ज़ल्द अपने बच्चों के श्रम की ज़रूरत पड़ती है, इसलिए इन बच्चों को छोटी उम्र से ही कठिन परिश्रम के काम सीखना ज़रूरी है और यही उनके भाग्य में है। इसी बजह से इनका स्कूल में ज्यादा देर तक रहना फिजूल है...!

लेकिन शिक्षित वर्ग के बच्चे आराम से पढ़ाई-लिखाई में अपना समय लगा सकते हैं, क्योंकि जो उनकी किस्मत में है उसको पाने के लिए उन्हें उच्च शिक्षा की ज़रूरत रहती है। उन्हें ऐसा ज्ञान हासिल करना भी ज़रूरी है जो एक विकसित दिमाग ही हासिल कर सकता है...!

यह सब ऐसे मरसले हैं जो मनुष्यों के हाथ में नहीं हैं। यह तो मानव व समाज की प्रकृति में ही निहित हैं... इनको कोई नहीं बदल सकता... हमें अटल चीज़ों को ही ध्यान में रखकर सोचना चाहिए...!

इस सबसे हमें यही निष्कर्ष निकालना चाहिए कि अगर किसी भी राष्ट्र में नागरिकों की शिक्षा के प्रति सही नज़रिया अपनाया जा रहा हो, तो दो बिलकुल अलग-अलग शिक्षा व्यवस्थाएं होनी चाहिए जिनमें कोई आपसी संबंध न हो।

(काफी लोगों का मत है कि 1988 की हमारी नई शिक्षा नीति के बुधे परिणाम कुछ-कुछ इसी तरह के हैं।)



संयोग : विनोद राघव
(अगले अंक में जारी)



इंतज़ार

अम...म्हांड्ड्ड! गबरू चिल्लाता है। आठ दिन का गबरू... मुलायम, सफेद रोएंदार नाजुक शरीर। शैशव की स्निध भोली आंखें। बहुत चंचल। खूंटे से बंधा उदास खड़ा है। और जैसे ही कोई बात अचानक याद आती है रंभाने लगता है। सुबह ही उसे मां का दूध पीने मिला। पीने भी भरपेट कहां दिया। दूध की धार मुंह में ज़रा ही तेज जाने लगी कि खींच लिया गया। बाद में जब छोड़ा गया तब रखा ही क्या था। मन भर भी न पाया कि मां को छोड़ दिया गया। अब शाम के धुंधलके में लौटेगी। तब तक गबरू क्या करे? वह चिल्लाता है अम...म्हांड्ड्ड...!

“अम्मां गबलू जुलूल भूखा लह गया है।” छुनू बताता है।

“उसे ठंड लगती होगी भीतर! बाहर लाकर बांध दो।” अम्मां चूल्हे पर दाल चलाती कहती है।

सरूप जैसे ही उसे खोलता है वह हाथ से छूटता-सा, चौकड़ियां भरता है। सरूप खिंचा-सा पीछे भागता है।

“ठंड लग रही थी मेरे बिटुआ को।” अम्मां उसका मुंह हाथ में लेकर कानों से नाक सटाती हुई दुलारती हैं। उसे यह सब अच्छा लगता है। कोई उससे बतियाए, पीठ सहलाए, उसे अच्छा लगता है। मनके जैसी आंखों को इधर-उधर दुलकायेगा, कान हिलाएगा जैसे वह सब समझ रहा है।

छुनू हुलस कर कहता है, “अम्मां तुमने गबलू को काजल लगाया है न?”

“नहीं तो!”

“वाह! लगाया कैछे नहीं। देखो इछकी आंखें छुन्दल लगती हैं काली... काली...”

“नटखट...”, अम्मां हंसकर गाल में एक चपत लगाती है, “यहीं खेलना गबरू के पास।” छुनू उसके कान, मुंह पैर... को छूकर देखता है, बात करता है। पर थोड़ी देर बाद वह चला जाता है। गबरू फिर अकेला रह गया। अब वह क्या करे। अकेले में उसका मन नहीं लगता। शाम न जाने

कब होगी। कुछ देर वह इधर-उधर देखता है फिर नरम-सी धूप में उसका मन सोने को होता है। आहिस्ता पैरों को मोड़कर बैठ जाता है और मुंह घुटनों पर रख सोने लगता है। बीच-बीच में किसी आहट या मक्खी के बैठने पर कान हिलाता है, आंखें खोलता है।

थोड़ी देर बाद उसे लगता है, वह बहुत सो लिया। शायद मां आ ही रही होगी। वह अचकचाकर खड़ा हो जाता है... अम...म्हांड्ड्ड...!

“अम्मां देखो गबलू फिल चिल्लाता है।”

“उसे घाम लगती होगी। ला भीतर बांध दूं।”

दिन बहुत लंबा लगता है। गबरू ‘बोर’ होता है। समय बिलकुल नहीं कटता। वह फिर रंभाता है... अम...म्हांड्ड्ड!

“अब क्यों चिल्ला रहा है? ऊं... चल खोल दूं थोड़ी देर...!”

आजादी पाकर वह थोड़ा खुश होता है। आंगन में चौकड़ी भरता है। उछलता है। कोई चीज़ दिखती है पास जाकर देखता है, संधता है। फिर अचानक उछल कर भागता है।

पर गबरू थोड़ी देर बाद फिर ऊब जाता है। अब क्या करें? समय है कि रत्ती-रत्ती सरक रहा है। उसे लगता है कब शाम हो, कब मां आए और कब दूध पीने मिले। वह थक कर हारा हुआ-सा बैठ जाता है। थोड़ी देर फिर सोकर समय काटना चाहता है।

अभी छुनू महाशय अपनी मित्र मंडली को लेकर आए थे, अपने गबरू को दिखाने। बच्चे कौतूहल व प्रसन्नता से उसे देखते रहे। कान कैसे हैं? पूँछ तो अभी छोटी है... सींग अभी नहीं है... बड़ा होगा तब उगेगो... यहां कानों के ऊपर... आहा माथे पर लाल ‘चंदक’ कैसा है?... “अच्छा है ना हमाला गबलू?” छुनू ने मान भरे स्वर में पूछा। गबरू को उनकी छेड़खानी ज़रा भी नहीं सुहाती। कभी कान पकड़ेंगे... कभी पूँछ... कभी मुंह... क्या यह कोई अच्छी बात है? वह

उठ खड़ा होता है। भागना चाहता है। पैर रस्सी में उलझ जाता है। वह जैसे सहायता के लिए पुकारता है... अ-.... म्हां-....

“अरे राम! लड़के भाग जाओ! क्यों तंग करते हो उसे। बेटा दूर से ही देखो। भैया वह छोटा है। डरता है न!” अम्मां पास आकर उसकी पीठ, गर्दन सहलाती है। वह अम्मां के कंधों पर मुंह टिका देता है। मानो शिकायत कर रहा हो, “अब हृद हो गई इंतजार की! मां सोचती ही नहीं कि गबरू भूखा होगा। आखिर दिन कितना लंबा होता है। कितनी देर लगा लेती है!”



...और आखिर इंतजार में धीरे-धीरे दिन ढलने लगा है। सूरज पहाड़ी के पीछे सरकने-सा लगा है। जैसे कोई दिन भर दफ्तर में काम कर शाम को अपने घर जाए, आकाश में लाइन की लाइन चिड़ियां, कौवे उड़ते आ रहे हैं। मुंडेर पर बैठी चिड़िया जैसी धूप भी लगता है कहीं उड़ गई। खेतों से लौटते बैलों की धंटियां बजने लगी हैं। गबरू को विश्वास हो चला है कि अब ज़रूर ही मां आ रही है। इसलिए वह रस्सी तुड़ाने-सा लगा है। बार-बार रंभा रहा है अ-.... म्हां-....

“वो देखो हमाली गैया आ गई... कितनी जल्दी... जल्दी आ रही है।” छुनू सूचना देता है।

गाय दूर से रंभाती है। गबरू वैसी ही नकल करता अ-.... म्हां-....

“सरूप खोल दे इसे! चल मैं बर्तन लेकर आती हूँ।” सरूप जैसे ही खोलता है गबरू बड़े उत्साह और वेग से उछल कर दौड़ता है। गाय हूँकती है। वह उतावला-सा लपककर पेट के नीचे पिछली टांगों में मुंह देता है। हड़बड़ाहट में उसे थन मिलता ही नहीं। जैसे-तैसे ढूँढकर पीने लगता है। पूँछ हिला हिलाकर, मुंह उछाल-उछालकर। गाय उसकी पीठ चाटती है। छुनू ताली बजाता है।

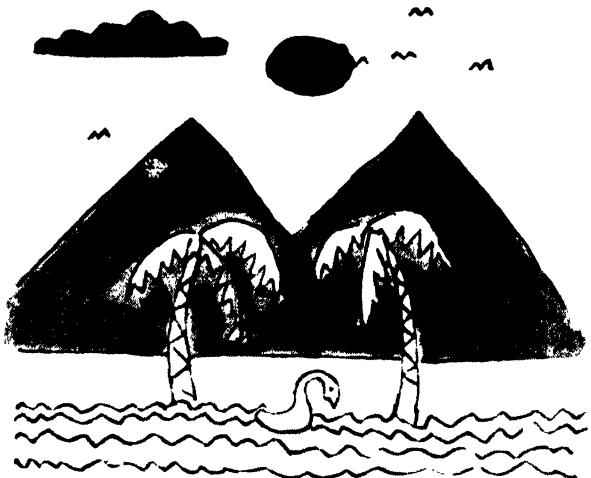
□ गिरिजा कुलभ्रेष्ठ



क्यों?

देश की हालत पर जब यापा
चर्चा करते हैं मैडम!
खाते खाते ठंडी ठंडी
आहें भरते हैं मैडम!

बाढ़ बताओ क्यूं आती है
क्यूं पड़ता है सूखा मैडम!
क्यूं गरीब का बच्चा अक्सर
सोता है, भूखा मैडम!



क्यूं कहते थे देश को अपने
सोने की विडिया मैडम!
और बहती थी कहां कहां से
मीठे दूध की नदियां मैडम!

कैसे-कैसे दुनिया भरके
धंधे होते हैं मैडम!
कैसे कैसे बड़े मियां के
बंदे होते हैं मैडम!

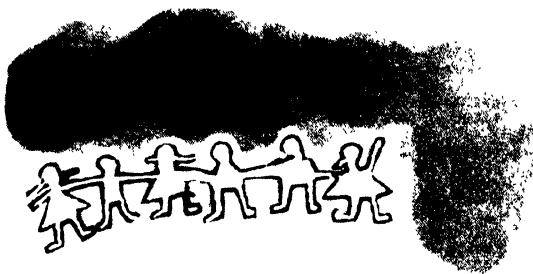
आप लोग भी बचपन में
ऐसा करते होंगे मैडम!
हम सब एक हैं गाते होंगे
फिर लड़ते होंगे मैडम!

□ राहुल उवराळ

चित्र : अक्षत चराटे

चकम्क

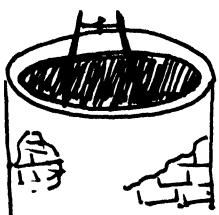
नव्यन, 1988



माथा पट्टी

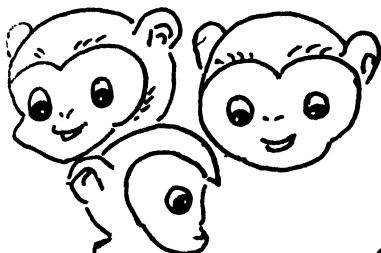
1.

किसी मुराने कुएं में उतरना खतरनाक हो सकता चाहे
कुआं सूखा भी हो। बताओ क्यों?



2.

एक झुंड के बंदर दो समूहों में खेल रहे थे। एक में उनके आठवें भाग के वर्ग जितने बंदर उछल-कूद कर रहे थे, दूसरे में 12 बंदर मिलकर शोर मचा रहे थे। झुंड में कितने बंदर थे?



3.

एक ऊंची इमारत में लगी लिफ्ट के अंदर एक व्यापारी ने छोटी दुकान खोल रखी है। सामान तौलने के लिए वह कमानी तुला (स्प्रिंग बैलेंस) काम में लाता है। बिक्री का काम वह केवल तभी करता है जब लिफ्ट नीचे से ऊपर जा रही होती है। कुछ लोगों का कहना है व्यापारी तौलने में ग्राहकों को ठगता है। उसकी कमानी तुला बिलकुल सही है। तुम्हारा क्या ख्याल है? अपने



28 उत्तर के लिए कारण भी दो।



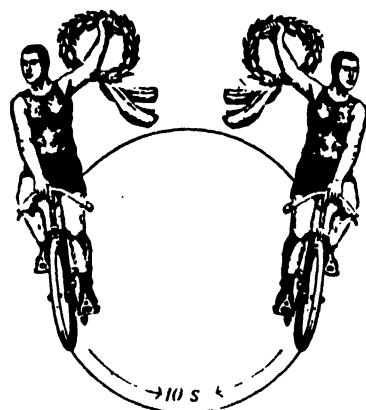
शिक्षक ने कक्षा में विद्यार्थियों से पूछा मान लो मैं एक घन मीटर के गुटके को छोटे-छोटे घन मिलीमीटर गुटकों में काटकर उनको एक के ऊपर एक जमाता हूं। बताओ, गुटकों का स्तम्भ कितना ऊंचा होगा? एक ने कहा, “कुतुब मीनार से भी ऊंचा होगा।” दूसरे ने कहा, “अरे स्तम्भ तो हिमालय से भी ऊंचा होगा।” किसका उत्तर ज्यादा सही है? और सही उत्तर क्या है?

5.

यदि हम अपने कान पर एक गिलास रख लें तो हमको उसमें गुनगुन की एक धुन सुनाई पड़ती है। इसका क्या कारण है?

6.

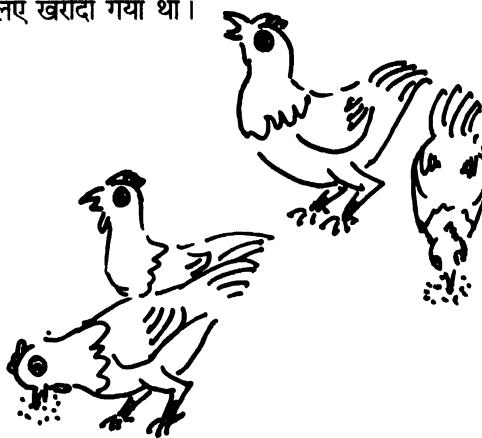
गोल रस्ते पर दो सायकिल-सवार स्थिर वेग से चल रहे हैं। जब वे परस्पर विपरीत दिशाओं में चलते हैं, तो हर 10 सेकेंड में मिलते हैं। पर जब वे समान दिशा में चलते हैं, तो एक सायकिल सवार दूसरे को हर 170 सेकेंड में पकड़ता है। रस्ते की लंबाई 170 मीटर है। प्रत्येक साइकिल सवार का वेग क्या होगा?



7.

सप्ताह में एक मुर्गी के लिए 1 किलोग्राम चारा के हिसाब से 31 मुर्गियों के लिए चारा खरीदा गया। यह आशा की गई कि मुर्गियों की संख्या बदलेगी नहीं। पर हर सप्ताह एक मुर्गी कम हो जाती थी। इसलिए चारा जितने समय के लिए खरीदा गया था उससे दुगने समय तक काम आया।

कितना चारा खरीदा गया था और कितने समय के लिए खरीदा गया था।



8.

एक कक्षा में 50 छात्र हैं। उनमें से 38 छात्र गणित पढ़ते हैं और 28 छात्र भौतिक शास्त्र। बताओ, कितने छात्र गणित तथा भौतिक शास्त्र, दोनों पढ़ते हैं।

9.

इस शब्द पहेली में पच्चीस प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के नाम छिपे हैं। ये नाम सीधे, आड़े, तिरछे या उल्टे अक्षरों से बनेंगे।

आ	जो	ह	ट	न	गु	ट	न	ब	गी
मा	इ	मे	वा	ट	र	मे	न	बे	ठे
इ	ना	जे	क	सी	ल्स	सो	य	ल	को
क	रा	मा	क	मि	बी	ई	म	वा	ल
ल	खु	र	कि	न्यू	ल	र	वा	ट्	म्ब
कै	द	को	के	क्स	ट	न	म्म	स	स
रा	वि	नी	क्रे	ट	ली	न	स	न	जॉ
डे	गो	कॉ	प	र	ति	क	स	श्वा	स्लि
ह	र	फ	रे	न	हा	इ	ट	डी	न
वै	ह	ए	ड	व	ई	जे	न	र	ए

वर्ग पहेली - 14

१
२
३
४

संकेत : बाएं से दाएं

- सचेत रहना (5)
- जल के पीछे आधी वायु (3)
- एक प्राचीन कवि (4)
- धान का लावा (3)
- दुनिया (3)
- अभिव्यक्ति का साधन (2)
- चुटकुला खस्त हुआ, अब... (2)
- अशिक्षित (3)
- नाक के बीच यह का सिर, अभिनेता (3)
- नदी तट पर लगने वाला फल (4)
- एक प्रकार की महीन सिलाई (3)
- प्रणाम (5)

संकेत : ऊपर से नीचे

- रामचरित मानस के एक दोहे का अंश (2, 2, 3, 2)
- प्यार जताने में मुकुट (2)
- हवा और उल्टे ताल में जेल (4)
- एक प्रसिद्ध दोहे की पंक्ति (2, 2, 1, 2, 2)
- एक मिठाई (2)
- झूठा-सच्चा (2)
- पैर की आहट, रेखागणित का एक शब्द (2)
- मुगल बादशाह (4)
- रहने की जगह (2)
- सबारी (2)

10.

नन्हे से पूछा गया कि पलंग पर कौन सो रहा है? उसने उत्तर दिया कि मेरे कोई भाई या बहन नहीं है। लेकिन सो रहे आदमी का पिता, मेरे पिता का बेटा है। बताओ नन्हे और सोने वाले आदमी में क्या रिश्ता है?

29

कहानी, कान की

हैलो... हैलो... हां मैं तुम्हारा कान बोल रहा हूं... सुन पा रहे हो ना! मैं आज तुम्हें अपनी कहानी सुनाना चाहता हूं। क्या... कह? वक्त नहीं है? अच्छा, तुम जो दुनिया भर की बक-बक, डांट-डपट, फुसफुसाहट, मशीनों की कर्कश आवाज़, रेडियो, टी.वी., प्रकृति की मधुर ध्वनियां, संगीत आदि सुनने को हमेशा तैयार रहते हो... किससे सुनते हो भला? कान से ही न! फिर अपने कान के बारे में ही नहीं सुनना चाहते। ठहरो मैं अभी तुम्हारे कान उमेठता हूं। ...हां अब आए ना रास्ते पर!

प्राकृतिक कम्प्यूटर

यह तो तुम जानते ही हो कि हम दो भाई हैं। एक बायां, दूसरा दायां। पिछली बार तुमने मेरी बहन आंख के बारे में पढ़ा ही होगा। मैं भी आंख से कम नहीं हूं। मैं एक ऐसा प्राकृतिक कम्प्यूटर हूं जिसकी तुलना में कृत्रिम (मानव निर्मित) कम्प्यूटर एकदम बच्चा है।

मेरा अंदरूनी परिपथ लघुरूप का एक ऐसा सुंदर नमूना है जो शायद और कहीं देखने को न मिले। छोटी सी जगह में मेरे इतने अधिक परिपथ तथा कनेक्शन हैं कि मैं आसानी से किसी बड़े शहर की पूरी टेलीफोन व्यवस्था संभाल सकता हूं। सुनने के अलावा, मेरा एक और महत्वपूर्ण काम है जिससे शायद तुम परिचित न हो। मैं शरीर का संतुलन बनाए रखता हूं। इस संतुलन के कारण ही तुम खड़े रह पाते हो और चलते समय गिरते नहीं हो।

लोग अक्सर अपनी आंखों को अधिक महत्व देते हैं। वास्तव में उनको उस बहरेपन का आभास नहीं है जो संवेदनात्मक और शारीरिक रूप से अंधेपन से भी कहीं गंभीर विकलांगता है। यदि मैं काम करना बंद कर दूं तो तुम ज़िंदगी भर के लिए एक ध्वनिरहित एकाकी खुली जेल में कैद हो जाओगे।

बाहरी कान से परदे तक

मेरे बाहरी कान को देखकर जो केवल चमड़े का एक टुकड़ा भर दिखता है—कुछ लोग हंसी - दृढ़ा करते रहते हैं। यह बाहरी हिस्सा तो केवल एकत्रित करने के लिए है। मेरा मायाजाल तो अंदर घुसने पर ही नज़र आएगा।

अच्छा मान लो कि तुम छोटे होकर एक चींटी के आकार में परिवर्तित हो गए। बस घुस पड़ो किसी कान में।

बाहरी कान से अंदर जाने वाला यह रास्ता ढाई सेंटीमीटर की एक नली के रूप में है। यह मेरे परदे (कर्ण पठह) तक जाती है। मेरी सुरक्षा को ध्यान में रखकर यह बिलकुल सीधी नहीं बल्कि थोड़ी घुमावदार है। घुमावदार होने से अंदर पहुंचने वाली हवा भी थोड़ी गरम हो जाती है। इस नली में असंख्य छोटे-छोटे बाल हैं। इसके अलावा लगभग 4000 मोम की ग्रन्थियां भी हैं जो कान को धूल, कीड़े-मकोड़ों व अन्य प्रकोपों से बचाती हैं। मोम कान को संक्रमित होने से भी बचाता है। खासकर जब हम गंदे तालाबों या नदियों में डुबकी लगाते हैं।

ओहो...! बस इन साहब के कान में चलने लगी खुजली। गंदगी और मोम निकालने के लिए मुझे तीली, सींक या पेंसिल आदि से खंरोचने की भला क्या ज़रूरत है! हां भई, मुझे खुद अपनी सफाई की चिंता है। मैं स्वयं गंदगी और अतिरिक्त मोम को निकालता रहता हूं। इस तरह खंरोचने से मेरे नाजुक कर्ण पठह को छोट पहुंची सकती है।

कर्ण पठह एक मज़बूत झिल्ली है जो हमेशा तनी हुई रहती है। इसी से सुनने की प्रक्रिया शुरू होती है। ध्वनि तरंगें जब इससे टकराती हैं तो यह भी उसी गति से कम्पन करने लगती हैं। ठीक वैसे ही जैसे पीटने पर ढोलक का चमड़ा कांपने लगता है। पर कर्ण पठह को पीटने की कोई ज़रूरत नहीं, क्योंकि यह बहुत ही संवेदनशील है। हल्के से हल्की फुसफुसाहट भी इसमें कम्पन उत्पन्न कर सकती है। और यह कम्पन कितना छोटा होता है इसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते। एक बटे अरब सेंटीमीटर के कम्पन। परंतु इतने छोटे कम्पन से भी घटनाओं की ऐसी विचित्र शृंखला उत्पन्न होती है कि इसे आज भी ठीक से समझा नहीं जा सका है। पर इसी रहस्यपूर्ण शृंखला के कारण हम कुछ अर्थपूर्ण ध्वनि न सिर्फ सुन पाते हैं वरन् उसे पहचान भी पाते हैं। चाहे वह ध्वनि हमारे किसी दोस्त की हो या बम विस्फोट की।

मध्य कर्ण

सुनने की इस प्रक्रिया को ठीक से समझने के लिए कर्ण पठह के पीछे घुसना पड़ेगा। यह जगह है मध्य कर्ण। यह आकार में सेम के दाने जितना बड़ा होगा। पर इतनी छोटी जगह में ही तीन हड्डियां हैं जो एक दूसरे से कब्जों की तरह जुड़ी रहती हैं। इनको निहाई, मुग्दरक (हथौड़ा) और रकाब कहते हैं। इनके ऐसे नाम इसलिए रखे गए हैं क्योंकि वे

आकार में इन्हीं वस्तुओं से मिलती-जुलती हैं। इन हड्डियों का काम है कर्ण पटह के कम्पनों का प्रवर्धन करना। ये कम्पनों को 22 गुणा प्रवर्धित करती हैं। प्रवर्धित कम्पन रकाब से लगी एक अंडाकार खिड़की द्वारा आंतरिक कर्ण में पहुंचते हैं।

आंतरिक कर्ण

आंतरिक कर्ण ही सुनने का असली अंग है। आंतरिक कर्ण द्रव भरी एक गुफा है जो शरीर की सबसे कठोर हड्डी से बनी है। इसका मुख्य श्रवण पुर्जा घोषेनुमा रचना है जिसे कर्णवर्त कहते हैं। इसकी घुमावदार भीतरी दीवारों पर हजारों बाल जैसी सूक्ष्म कोशिकाएं होती हैं। प्रत्येक कोशिका एक विशेष कम्पन के प्रति संवेदनशील होती है। ऐसी लगभग 24,000 कोशिकाएं हैं। हाँ भई, इस छोटी-सी जगह में 24,000 तार वाला यह अनेका सितार है। जब मध्य कर्ण का रकाब अंडाकार खिड़की पर दस्तक देता है तो आंतरिक कर्ण का द्रव हिलने लगता है। मान लो रकाब सा स्वर की दस्तक देता है; तो आंतरिक कर्ण की सा स्वर वाली कोशिका द्रव में उसी गति से कम्पन करने लगती है जिस गति से दस्तक दी गई थी। जैसे हवा में धास की पत्ती झूलती है।

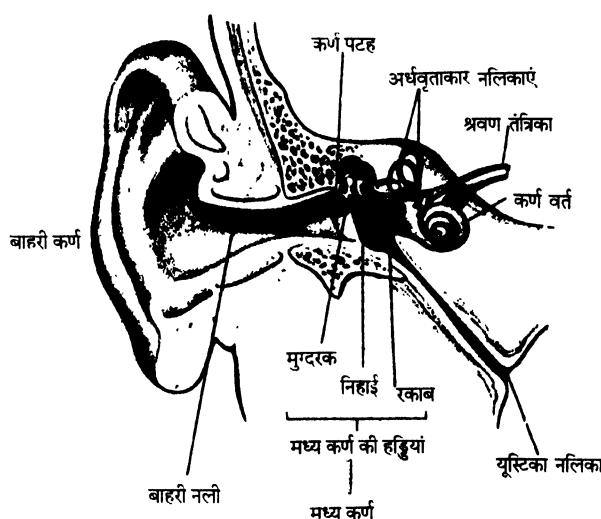
इस झूलने से बिजली के सूक्ष्म आवेग उत्पन्न होते हैं जो श्रवण तंत्रिका में पहुंचते हैं। यह तंत्रिका आवेगों में बदल गए कंपनों को मस्तिष्क तक पहुंचाती है। कहने को मस्तिष्क

मुझ से केवल दो सेन्टीमीटर दूर है, पर इन दो सेन्टीमीटर में तंत्रिका के लगभग 3000 बिजली के परिपथ हैं। दोनों कानों के कर्णवर्त हजारों कम्पनों (विद्युत आवेगों) को मस्तिष्क तक पहुंचाते रहते हैं। मस्तिष्क इन सभी आवेगों का मूल्यांकन और निर्वचन करता है जिससे हम अर्थपूर्ण ध्वनि सुन पाते हैं। वास्तव में मेरा काम केवल ध्वनि को एकत्र कर व्यवस्थित करना है। असल में तो तुम मस्तिष्क द्वारा ही सुनते हो।

अभी तक मैं केवल उन ध्वनियों का ज़िक्र कर रहा था जो हवा के कम्पन से प्रसारित होती हैं। परंतु मैं ऐसी ध्वनियों को भी सुन पाता हूँ जो हड्डियों द्वारा प्रसारित होती हैं। जब तुम बोलते हो तो ध्वनि की कुछ तरंगे हवा द्वारा मुझ तक पहुंचती हैं। साथ ही कुछ तरंगें तुम्हारी हनु अस्थि (जबड़े की हड्डी) द्वारा आंतरिक कर्ण के द्रव तक पहुंचती हैं। दोनों ध्वनियों में अंतर होता है। इसीलिए जब तुम टेप की हुई अपनी आवाज़ को सुनते हो तो वह बदली हुई लगती है। खाते हुए चबाने का शोर भी कानों में सुनाई देता है।

संतुलन बनाने में भूमिका

सुनना—आंतरिक कर्ण का एक काम है। दूसरा काम है—शरीर का संतुलन बनाए रखना। कर्णवर्त के ऊपर तीन छोटी द्रव भरी अर्धवृत्ताकार नलिकाएं हैं। ये नलिकाएं संतुलन



कान के तीन भाग हैं : बाहरी कर्ण, मध्य कर्ण और आंतरिक कर्ण। बाहरी कर्ण ध्वनि को एकत्र करता है। हवा से भरा मध्य कर्ण ध्वनि के कम्पनों का संचार करता है। श्रवण के अंग द्रव भरे आंतरिक कर्ण में स्थित होते हैं। यहाँ से श्रवण तंत्रिका मस्तिष्क के श्रवण केन्द्र तक जाती है।

क्रिया की महत्वपूर्ण अंग है। एक नलिका शरीर की ऊपर-नीचे होने वाली गति को भांपने में मदद करती है, दूसरी आगे-पीछे की गति को और तीसरी पार्श्वक (बाजू की) गति को। जब तुम गिरते हो तो गिरने की दिशा के अनुसार संबंधित नलिका का द्रव विस्थापित होता है। नलिका की तंत्रिकाएं विस्थापन की जानकारी मस्तिष्क तक पहुंचाती हैं। मस्तिष्क मांसपेशियों को सिकुड़ने की आज्ञा देता है, जिससे तुम सीधे रह पाते हो और गिरने से बच जाते हो।

घटती श्रवण क्षमता

हमारी श्रवण क्षमता जन्मते ही घटने लगती है। कान के ऊतक अपना लचीलापन खोते जाते हैं। कोशिकाएं क्षतिग्रस्त होकर विकृत होने लगती हैं। कुछ विशेष स्थानों पर कैलिश्यम जमने लगता है। बाल्य अवस्था में मेरी श्रवण या आवृति सीमा 16 से 30,000 कम्पन (आवर्तन) प्रति सेकण्ड है। 16 कम्पन प्रति सेकण्ड से कम आवृति की ध्वनि हम नहीं सुन सकते, केवल गड़गड़ाहट महसूस होती है। उदाहरण के तौर पर हम अपनी कुछ शारीरिक क्रियाओं की आवाजें जिनकी आवृति 16 कम्पन प्रति सेकण्ड से कम है नहीं सुन पाते हैं। हड्डियों के चटकने की आवाज सुनी जा सकती है क्योंकि इस आवाज की आवृति 16 कम्पन प्रति सेकण्ड से अधिक है। मांसपेशियों की आवाज नहीं, गड़गड़ाहट सुनी जा सकती है। अपने दोनों कानों को हाथों की तर्जनी से दबाकर बंद करो। तुम्हें यह गड़गड़ाहट सुनाई देगी। यह तुम्हारी तरीफ हुई उंगलियों तथा बाहों की मांसपेशियों की आवाज की गड़गड़ाहट है।

युवावस्था में पहुंचते-पहुंचते श्रवण की ऊपरी सीमा घटकर 20,000 आवर्तन प्रति सेकंड हो जाती है। पचास साल की उम्र में यह सीमा केवल 8,000 आवर्तन प्रति सेकण्ड और वृद्धावस्था में मात्र 4,000 आवर्तन प्रति सेकंड ही रह जाती है। इस उम्र में शांत वातावरण में ही कोई बात सुनी जा सकती है। जहां शोर-गुल हो रहा हो वहां सुनना मुश्किल हो जाता है। वृद्धावस्था में निम्न आवाज को उच्च आवाज के मुकाबले ज्यादा आसानी से सुना जा सकता है।

वृद्धावस्था में एक अन्य किसी की क्षति होती है जिसे डेसिबल क्षति कहते हैं। डेसिबल किसी भी आवर्तन की ध्वनि की तीव्रता का नाप है। शांत कमरे में सवा मीटर की दूरी पर होने वाली फुंसफुसाहट लगभग 30 डेसिबल है। सामान्य बातचीत 60 डेसिबल है, बैंड की 120 डेसिबल और बंदूक की आवाज 140 डेसिबल। इसका यह मतलब नहीं है कि

32 बैंड की आवाज की प्रबलता सामान्य बातचीत से केवल

दुगुनी है। नाप के हर 20 डेसिबल बढ़ने पर आवाज की प्रबलता 100 गुणा अधिक होती है।

समस्याएं और भी हैं।

मेरी जटिल बनावट के कारण मुझमें कई गड़बड़ियां भी होती रहती हैं। कभी-कभी मेरा भीतरी परदा फट जाता है। आमतौर पर यह क्षति अपने आप सुधर जाती है, परंतु कभी-कभी आपरेशन की ज़रूरत भी पड़ती है। एक अन्य तकलीफ है जिसमें बजने की आवाज कान में लगातार सुनाई देती है। इस बीमारी को टिनिटस कहते हैं। टिनिटस होने के कई कारण संभावित हैं। जैसे दर्वाईयों का असर, रक्त संचरण में बदलाव, श्रवण तंत्रिका पर फोड़ा होना आदि। इन कारणों के उपचार पर कान बजना बंद हो जाता है। मध्य कर्ण की भी कुछ समस्याएं हैं। प्रतिजैविकी दवाओं की खोज के पहले मध्य कर्ण पर संक्रामक रोगों के लगने का नतीजा अक्सर बहरापन होता था। रोग के कीटाणु मध्य कर्ण से कंठ तक जाने वाली यूस्टिका नलिका से पहुंचते हैं। कंठ एक ऐसी जगह है जहां रोगाणु अत्याधिक मात्रा में पाए जाते हैं। इस संदर्भ में एक बात ज़रूर याद रखना। जब तुम्हें कभी सर्दी जुकाम हो, तो अपनी नाक जोर लगाकर साफ मत करना। ऐसा करने से कंठ का प्रदूषण मध्य कर्ण में आ सकता है।

कभी-कभी हड्डियों के बढ़ जाने (अधिवृद्धि) से मध्य कर्ण की हड्डियां दृढ़ हो जाती हैं और हिल नहीं पाती हैं। इनकी गति रुकने पर श्रवण क्षमता का भी अपक्षय होता है। इसका इलाज है श्रवण सहाय यंत्र का उपयोग या आपरेशन। आपरेशन में रकाब को निकालकर स्टील के टुकड़े का रोपण किया जाता है। जब हड्डियां फिर से गतिशील हो जाती हैं तब दुबारा सुना जा सकता है।

पर आज की दुनिया में हमें सबसे बड़ा खतरा शोर से है। जो व्यक्ति शोरग्रस्त परिस्थिति में काम करते हैं या रहते हैं उनमें स्थाई बहरेपन की संभावना हमेशा बनी रहती है। प्रयोगों में यह पाया गया कि चूहे को लंबे समय तक शोरग्रस्त वातावरण में रखने पर चूहा मर जाता है। सिगरेट, बीड़ी पीना भी श्रवण के लिए हानिकारक है। क्योंकि सिगरेट में उपस्थित निकोटीन रसायन मध्य कर्ण की रक्त शिराओं को संकुचित करता है जिससे कान को सही पोषण नहीं मिल पाता है।

मैं तुम्हारे कान में यह बात डाले दे रहा हूं कि अपने अन्य अंगों की तरह तुम कान का ध्यान भी रखा करो। अगर इतना सब जान लेने पर भी तुम्हारे कान पर जूँ नहीं रेंगी तो फिर कोई कुछ नहीं कर सकता।

(आय एम जोज बॉडी' से रूपांतरित)

अपनी प्रयोगशाला

अपनी आवाज़ सुनो...

और देखो...

तुम अपनी आवाज़ को एक सरल यंत्र के सहारे देख भी सकते हो।

एक बड़े गुब्बारे में हवा भरो और बांधकर कुछ समय के लिए छोड़ दो। ऐसा करने से उसका रबर तन जाएगा। अब आलपिन चुभो कर उसे फोड़ लो।

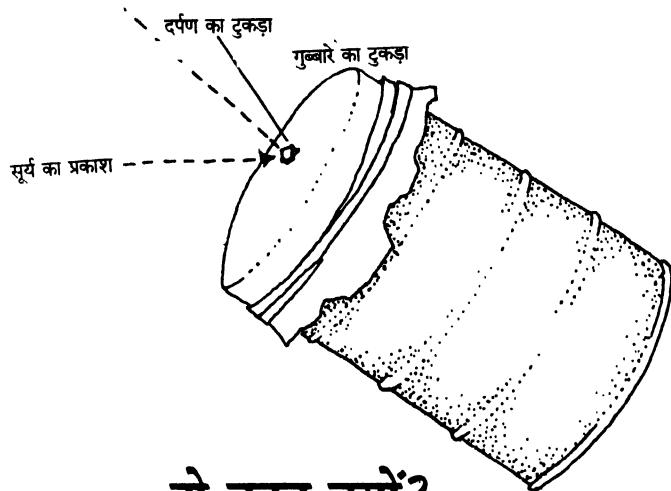
अब मोटे गते का बेलनाकार टुकड़ा, या बेलनाकार डिब्बा लो। पर इनके दोनों सिरे खुले होने चाहिए। डिब्बे के किसी एक सिरे पर गुब्बारे का रबर तान कर बांधो, ठीक उसी तरह जैसे ढोलक पर चमड़ा मढ़ा रहता है। हम इस तरीं हुई रबर को झिल्ली कह सकते हैं। अब झिल्ली के बीचों-बीच

दर्पण का एक टुकड़ा फेविकॉल (या अन्य किसी चीज़) से चिपकाओ।

तुम्हारा यंत्र तैयार है।

अब एसी जगह चुनो जहां यंत्र को रखने पर, उसके दर्पण पर पड़ने वाली सूर्य की किरणें प्रतिबिंबित होकर दीवार पर पड़ें। अब तुम यंत्र के खुले सिरे के पास गाना गाओ, बात करो या मन हो तो चिल्लाओ। तुम जितनी ज़ोर से आवाज़ करोगे, झिल्ली उसी अनुपात में ऊपर नीचे होती है। आवाज़ जितनी निम्न या उच्च होगी, झिल्ली के कम्पन की गति भी उतनी ही मंद या तेज होगी। इसके फलस्वरूप, दीवार पर पड़ने वाला प्रकाश का बिंदु हिलता रहेगा। बिंदु जिस गति से हिलता या कांपता है, वह तुम्हारी आवाज़ की आवृत्ति का नाप है। बिंदु जितना सरकता है वह तुम्हारी आवाज़ की तीव्रता (प्रबलता) का नाप है।

दीवार पर प्रतिबिंब



दो कान क्यों?

अपने एक कान को तर्जनी से बंद करो। क्या अब भी तुम अपने आसपास होने वाले शोरगुल को सुन पा रहे हो? सुन पा रहे हो तो भला फिर दो कान होने की क्या ज़रूरत है? इसको समझने के लिए एक छोटा-सा प्रयोग करो।

अपनी आंखों पर एक पट्टी बांधो और एक कान को रुई से बंद करो। अब अपने किसी दोस्त को कमरे में कहीं भी दीवार को पैमाने से खटखटाने को कहो। या किसी दीवार

घड़ी को कहीं छिपा कर रखने को कहो। अब तुम उस स्थान का अनुमान लगाने की कोशिश करो जहां से खटखटाने या घड़ी की टिक-टिक की आवाज़ आ रही है। आसान नहीं है न!

अच्छा अब कान से रुई निकालो और आने वाली आवाज के स्रोत को पहचानने की कोशिश करो। स्रोत पहचान पाना अब शायद आसान है न! बस इसीलिए हमें दो कानों की ज़रूरत होती है।

दो कानों के होने से ही हम ध्वनि की दिशा तय कर पाते हैं। कैसे?

प्रयोग में पैमाने की खटखटाहट दोनों कानों पर पड़ती है। परंतु ध्वनि पास वाले कान में एक क्षण पहले पहुंचती है और दूसरे कान में एक क्षण बाद। इस अंतराल के आधार पर

ही हमारा मस्तिष्क ध्वनि की दिशा निर्धारित करता है। इस क्रिया में मस्तिष्क को एक अन्य संकेत भी मिलता है। जो कान ध्वनि के स्रोत के सामने होता है उसमें ध्वनि अधिक जोर से (प्रबल) सुनाई देती है। अपेक्षाकृत दूसरे कान में ध्वनि हल्की (मृदु) सुनाई पड़ती है। क्योंकि ध्वनि की तरंगों और कान के बीच सिर होता है।

आवाज़ क्यों बदलती है?



तुमने रेल्वे स्टेशन के प्लेटफार्म पर खड़े होकर कभी दूर से आती रेलगाड़ी की सीटी सुनी है? या फिर कभी सड़क पर दौड़ती अग्नि शामक गाड़ी की धंटी! अगर तुमने ध्यान दिया हो तो इसमें एक विचित्र प्रक्रिया होती है। सीटी या धंटी की आवाज़ जब दूर से आती है तो वह निम्न लगती है। जैसे-जैसे गाड़ी पास आती है वह उच्च लगने लगती है। ऐसा क्यों होता है? यह और बात कि रेलगाड़ी या अग्नि शामक में बैठे चालक को ध्वनि का यह परिवर्तन महसूस नहीं होता है।

इस प्रक्रिया को समझने के लिए यहां दिए चित्र को देखो। यह चित्र अग्नि शामक की बजती धंटी से उत्पन्न कम्पनों को दर्शाता है। कम्पन हवा में सभी दिशाओं में फैले हैं। परंतु अग्नि शामक के सामने वे कुछ सिमटे हुए (संपीड़ित) से हैं और पीछे फैले हुए (विरलित) हैं। यानी आगे की तरफ क्रमिक कम्पनों के बीच की दूरी कम है और पीछे की तरफ अधिक। यह इसलिए होता है क्योंकि गाड़ी आगे बढ़ रही है जिससे प्रत्येक क्रमिक कम्पन का केंद्र आगे सरकता है। यदि हम गाड़ी के आगे खड़े हैं तब प्रति सेकण्ड हमारे कान पर अधिक कम्पन (संपीड़न) पड़ते हैं। यदि हम उसके पीछे खड़े हैं तब प्रति सेकण्ड कम कम्पन पड़ते हैं। हमारे कान ध्वनि की आवृत्ति (तारत्व) को इसी आधार पर पहचानते हैं कि उन पर प्रति सेकण्ड कितने कम्पन पड़ रहे हैं। इसीलिए

आने वाली गाड़ी की धंटी की आवाज़ उच्च लगती है और दूर जाने वाली गाड़ी की धंटी की आवाज़ निम्न लगती है। परंतु अग्नि शामक में बैठे चालक के कान पर कम्पन समान गति से पड़ते हैं। इसीलिए वह एक ही आवृत्ति (तारत्व) की ध्वनि सुनता रहता है।

गोल धूमने पर चक्कर क्यों आते हैं?

गोल धूमते समय हमारे शरीर को संतुलन बनाए रखने के लिए बहुत काम करना पड़ता है, वरना हम गिर पड़े। संतुलन बनाए रखने के इस काम में कान महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

हमारे दोनों कानों के भीतर तीन छोटी अर्धवृत्ताकार नलिकाएं हैं। इन नलिकाओं के कुछ हिस्सों में बाल जैसी पतली तंत्रिकाएं हैं तथा इनमें द्रव भरा हुआ है। जब हम अपना सिर हिलाते हैं तब इन नलिकाओं में से एक का द्रव लहराने लगता है, जिससे तंत्रिकाएं थोड़ी-बहुत हिलती-डुलती हैं। हिलने-डुलने पर वे मस्तिष्क को संदेश भेजती हैं कि हम हिल या चल रहे हैं।

जब हम गोल चक्कर काटते हैं तब नलिकाओं का द्रव तेजी से इधर-उधर लहराने लगता है। हमारे रुकने पर द्रव का लहराना तुरंत शांत नहीं होता, वह कुछ क्षणों तक लहराता रहता है। यानी इन शब्दों में भी मस्तिष्क को वही संदेश मिलता रहता है कि हम गोल-गोल धूम रहे हैं। जबकि उसी वक्त आंखें मस्तिष्क को बताती हैं कि हम स्थिर हो गए हैं। ऐसी स्थिति में मस्तिष्क भ्रम में पड़ जाता है और इसी भ्रमित स्थिति के कारण हमें चक्कर महसूस होते हैं।



बंद

गिजु मार्डि की कलम से..

मास्टरजी सवाल पूछने लगे और रमण जवाब न दे सका। उससे उत्तर देते न बना।

पिछली रात वह मेहमान के साथ सिनेमा देखने गया था। सुबह देरी से उठा इसलिए सबक याद नहीं किया।

मास्टरजी शिक्षाशास्त्र पढ़े हुए थे। 'सबक करके न लाने वाले विद्यार्थी को शाला समय के बाद रोक कर रखना चाहिए। इससे वह उकताहट अनुभव करेगा और अगले दिन पाठ याद करके लाएगा।' मास्टरजी ने इस सूत्र का प्रयोग किया।

विद्यालय बंद होते समय मास्टरजी बोले, 'रमण की घंटे भर के लिए शाला से छुट्टी बंद। चपरासी इस पर नज़र रखेगा। वह देखेगा कि यह कहीं भाग न जाए।'

रमण को घंटे भर की कच्ची जेल मिली।

वैसे तो रमण होशियार था; उसे पाठ आते थे। आज भी अगर उसे मौका मिला होता तो वह पाठ याद कर लाता। लेकिन एकाध बार वह नहीं कर सका, इसके लिए शिक्षा-शास्त्र के अनुसार उसे सजा मिली।

मास्टरजी घर गए; लड़के भी गए। रमण अकेला रह गया।

उसे याद आया कि घर पर मोहमान के पुत्र उसका इंतज़ार कर रहे होंगे। आज तो सबों को सरोवर देखने जाना था, सरोवर देखने का समय हो गया था।

रमण के पास से होकर कई साथी छात्र खेल के मैदान की ओर गए थे। रमण उन्हें देखता रह गया। उठ कर उनके साथ जाने का उसका मन हुआ, पर उसकी नज़र चपरासी पर गई।

रमण बार-बार घड़ी देखता, 'कब एक घंटा पूरा हो और कब छूटूं। मेहमान घूमने चले गए हों तो जाकर गली में खेलूं, नहीं तो माताजी के मंदिर में जाकर उनके श्रृंगार में भाग लूं।' रमण को माताजी के तोरण और श्रृंगार का काम करना आता था, और वह अक्सर किया करता था।

रमण मन ही मन मास्टरजी पर खीझ रहा था। कहने

लगा, 'कैसा गंदा मास्टर है! कितना जोर-जोर से बोलता है। चलना भी नहीं आता। कैसी बेडौल पगड़ी बांधता है!'

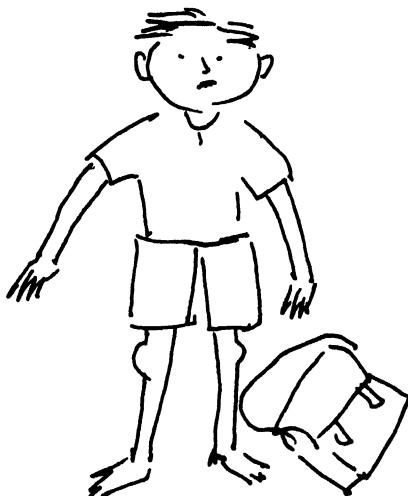
बोलते-बोलते जब थक गया तो उसने पाटी पर एक चित्र बनाया—एक व्यक्ति का, एक आंख से भैंगा और एक हाथ से रहित। चित्र के नीचे उसने लिखा, 'यह हरिया काना और भैंगा।' फिर वह बोला, 'हरिया काना, हरिया भैंगा।'

उसके मास्टरजी का नाम हरिशंकर था।

फिर उसने पाटी पर थू-थू करके थूका और मास्टर को मसल डाला।

मुश्किल से बीस मिनट बीते थे। वह सोचने लगा, 'किसलिए मुझे रोका गया? गृहकार्य करता भी कैसे? मास्टर अगर सिनेमा देखने जाए तो फिर क्या वह अगले दिन पाठ करके ले आएगा? उसका बेटा जब जाता है तो वह तो पाठ करके नहीं लाता। तब तो मास्टर कहता है, "अच्छा, कल साथ ही दिखा देना।" मास्टर अगर मुझसे कहे तो आठ दिनों का काम एक-साथ कर लाऊं। मुझे कौनसा नहीं आता? इस महीने तो मैंने कक्षा में दूसरा नंबर पाया है।'

रमण उकताने लगा। उसने किताब निकाल कर फेंक दी, 'जा, नहीं पढ़ना! तुझे पढ़ांगा तो गृहकार्य करना पड़ेगा ना! कल से शाला में ही नहीं आऊंगा। छोड़ दूंगा। भले ही पापा मारें। दूसरे कहां पढ़ते! अफ्रीका चला जाऊंगा।'



रमण को कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। उसने पत्थर इकट्ठे किए और जाली पर फेंकने लगा। चपरासी ने आकर उसे रोका, तो शांत होकर बैठ गया। घड़ी में 5 बज कर 35 मिनट हुए थे। अभी बहुत समय बाकी था।

रमण ने भाग जाने का इरादा किया। धीमे-धीमे चल कर जाली के पास पहुंचा और नीचे झुक कर भागने वाला ही था कि चपरासी ने कान पकड़ा, 'हें! भाग छूटना है क्या?'

रमण वापिस शाला के कमरे में आकर बैठा।

इतनी देर में वह तीन बार पेशाब कर आया, बीस बार ऊंचा-नीचा हुआ, छह-सात बार शाला के चबूतरे के चारों ओर घूमा।

आखिर में रमण को कुछ न सूझा तो लकड़ी लेकर



गड़ा खोदने लगा। थोड़ा खोदा, उसमें पत्थर ठसाये और उन पर कूदा।

चपरासी ने पूछा, 'क्या कर रहा है बे?'

बोला, 'कुछ नहीं, यूं ही!' फिर वह मन ही मन बोला, 'यहां तो हरिये को दबाया है।'

छह बजने में पांच मिनट बाकी थे। 'अब छूट्टंगा' उसकी आंखों में तेज आ गया, चेहरा जगमगा उठा। किताबें हाथ में लीं, और छह के घंटे लगे कि दौड़ कर शाला से बाहर सड़क पर, और वहां से सीधे घर।

मास्टरजी ने रमण को नियमानुसार और शास्त्रानुसार शाला में रोका था, और रमण क्या कर रहा था, वह हमने देखा। क्या उसे दंड मिला? क्या उसे सीख मिली? क्या उसका शिक्षा के प्रति अनुराग जागा?

शिक्षक के प्रति उसकी भावना कैसी बनी? पाठ दूसरे दिन बराबर करके लाए, इसके बासे यह सजा थी, या न करके लाने के लिए? पाठ तो करके लाया ही नहीं था, वह बात तो गई-गुजरी। अगले दिन पाठ न करके लाने का क्या कारण था? तब किसलिए नाहक ही उसने परहेज किया? हमें मास्टर हरिशंकरजी से और शिक्षाशास्त्र से इनका उत्तर पूछना

'शिक्षक हो तो...' से। मोण्टेसरी बाल शिक्षण समिति, राजलंदंसर के संजन्य से।

गुजराती से अनुवाद : रामनरेश सोनी

उत्तर : अबदूबर अंक के

2. यदि मुनिया 3 दियासलाई उठाती है तो उसका साथी 3 दियासलाई उठाकर खेल जीत लेगा। इसलिए मुनिया को 2 दियासलाई उठाता है तो मुनिया 3 दियासलाई उठाकर खेल खत्म कर सकती है। यदि साथी 3 दियासलाई उठाता है तो मुनिया 1 दियासलाई उठाकर बाजी जीत लेगी।
4. सात बार।
6. $2^{22} = 4,194,304$
8. दूसरे गिलास का पानी पांचवें गिलास में डाल दो। गिलास को फिर अपने स्थान पर रख दो।

5.	1	11	6	16
	5	14	3	9
	15	5	12	2
	10	4	13	7

1	15	5	12
8	10	4	9
11	6	16	2
14	3	13	7

वर्ग पहली-13 : हल

बाएं से दाएं

2. हिसाब 5. अलादीन 6. यादगार 7. हार 8. नारू 9. भोजन 12. लवण
14. धोंस 15. पद 17. उपासक 18. योग्यता 19. बालिग

ऊपर से नीचे

1. कलाकार 2. हिनहिनाना 3. बयार 4. दगबाज 7. हासिल 10. नगद
11. असहयोग 13. बज्रपात 15. पलायन 16. रक्तवा

नन्हा राजकुमार

अब तक तुमने पढ़ा...

लेखक को बचपन में बड़ों ने विद्र बनाने से हतोत्साहित किया तो वह पायलट बन बैठा। अपनी एक यात्रा के दौरान उसे रेगिस्ट्रान में जहाज उतारना पड़ा। वहां उसकी भेट एक छोटे से राजकुमार से हुई। राजकुमार ने अपने ग्रह के बारे में बहुत-सी विचित्र बातें बताई। उसने अपनी एक यात्रा का सिक्क किया जिसके दौरान उसकी मुलाकात फूल, राजा, दम्भी, शराबी, व्यवसायी और एक जन्ति जलाने वाले से हुई। अब आगे पढ़ो...

छठा ग्रह दस गुना बड़ा था। उस पर एक बूढ़े महाशय रहते थे जो एक बड़ी-सी किताब लिख रहे थे।

“अरे!” राजकुमार को देखते ही वह चिल्लाया, “यह रहा एक अन्वेषक।”

राजकुमार मेज के पास दम लेने के लिए बैठ गया। बहुत यात्रा कर चुका था वह।

“कहां से आ रहा है?”

“कौन सी किताब है यह,” राजकुमार ने पूछा, “क्या कर रहे हैं आप?”

“मैं तो भूगोलवेत्ता हूं।”

“भूगोलवेत्ता का अर्थ?”

“वह एक विद्वान होता है जिसे पता होता है कि कहां सागर, कहां नदियां—नगर, पहाड़ और रेगिस्ट्रान पाए जाते हैं?”

“यह तो मज़ेदार बात हुई, यह तो एक अच्छा व्यवसाय हुआ।”

राजकुमार ने इस भूगोलवेत्ता के ग्रह पर नज़र ढौड़ाई। उसने अभी तक इतना शानदार ग्रह नहीं देखा था।



“तुम्हारा ग्रह तो बड़ा सुंदर है। यहां समुद्र है क्या?”

“हो सकता है।”

“वाह! राजकुमार थोड़ा हताश हुआ, और पहाड़ है यहां?”

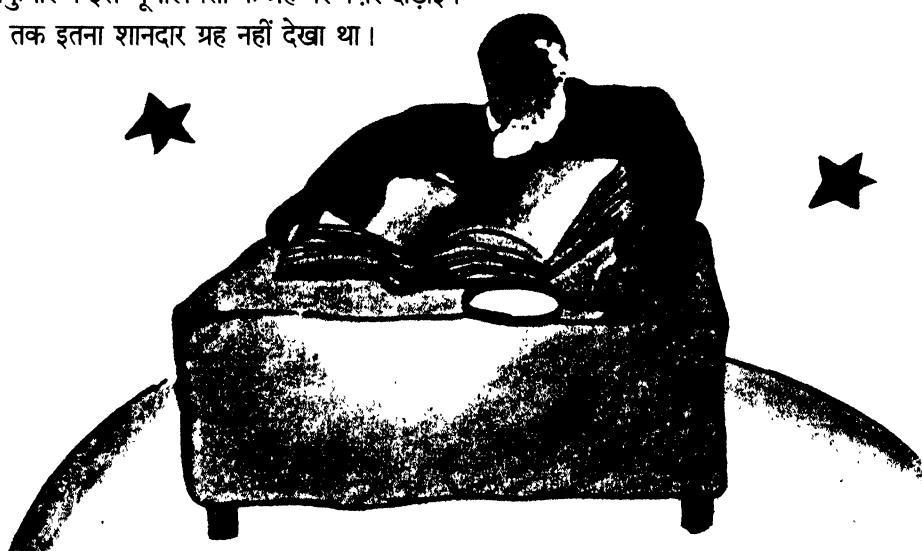
“मुझे कैसे मालुम होगा?”

“नगर, नदियां और रेगिस्ट्रान हैं यहां?”

“इनके बारे में भी मुझे नहीं मालुम।”

“लेकिन आप तो भूगोलवेत्ता हैं।”

“हूं तो लेकिन खोज तो करता नहीं। वह प्रकृति मुझमें बिल्कुल नहीं है। भूगोलवेत्ता तो जाएगा नहीं नगरों, नदियों, पहाड़ों, सागरों महासागरों और रेगिस्ट्रानों की गिनती करने। इधर-उधर धूमना उसका काम नहीं। यह तो काफी महत्वपूर्ण होता है। वह अपनी कुर्सी नहीं छोड़ सकता। यहां उसे खोज करने वाले मिल जाते हैं। वह उनसे प्रश्न करता है और



खोजकर्ताओं के अनुभवों को नोट करता है। और अगर किसी खोजकर्ता का बयान दिलचस्प लगे तो वह पता लगाता है कि वह कैसा आदमी है?"

"वह किसलिए?"

"क्यों कि ऐसा एक व्यक्ति जो झूठ बोलता हो भूगोल की किताबों की मिट्टीपलीद कर देगा। वह भी जो शराबी हो।"

"लेकिन क्यों?"

"क्योंकि शराबी को चीज़ों दोहरी दिखाई पड़ती हैं और भूगोलवेत्ता उसके बयान के अनुसार जहां एक पहाड़ है वहां दो पहाड़ लिख देगा।"

"मैं एक व्यक्ति को जानता हूं, "राजकुमार बोला, "जो अच्छी खोज नहीं कर सकता।"

"हो सकता है। यदि खोज करने वाले का चरित्र अच्छा है तो उसके अविष्कार के बारे में छानबीन की जाती है।"

"वहां जा कर देखा जाता है?"

"नहीं भाई, जाना तो मुश्किल होता है। हां उससे कहा जाता है कि वह अपनी खोज के बारे में सबूत दे। उदाहरण के लिए यदि आविष्कार किसी बड़े पहाड़ से सम्बंधित है तो उससे कहा जाता है कि वह वहां से बड़ी-बड़ी चट्ठानें लाए।"

अचानक वह भूगोलवेत्ता भावावेश में आ गया।

"तू... तू भी तो अन्वेषक है। तू तो दूर से आ रहा है। मुझे अपने ग्रह के बारे में बता।"

और उस विद्वान ने अपना रजिस्टर खोला, पेंसिल बनाई। खोज के विषय में पहले पेंसिल से लिखा जाता है फिर जब बात साबित हो जाती है तब रोशनाई से।

"हां तो?" उसने राजकुमार से पूछा।

"अच्छा! अच्छा! मेरे ग्रह पर कोई खास बात नहीं है। छोटा सा है। वहां तीन ज्वालामुखी हैं दो प्रज्ज्वलित और एक सुप्त। लेकिन कौन जाने..."

"कौन जाने," भूगोलवेत्ता ने दोहराया।

"मेरे वहां एक फूल भी है।"

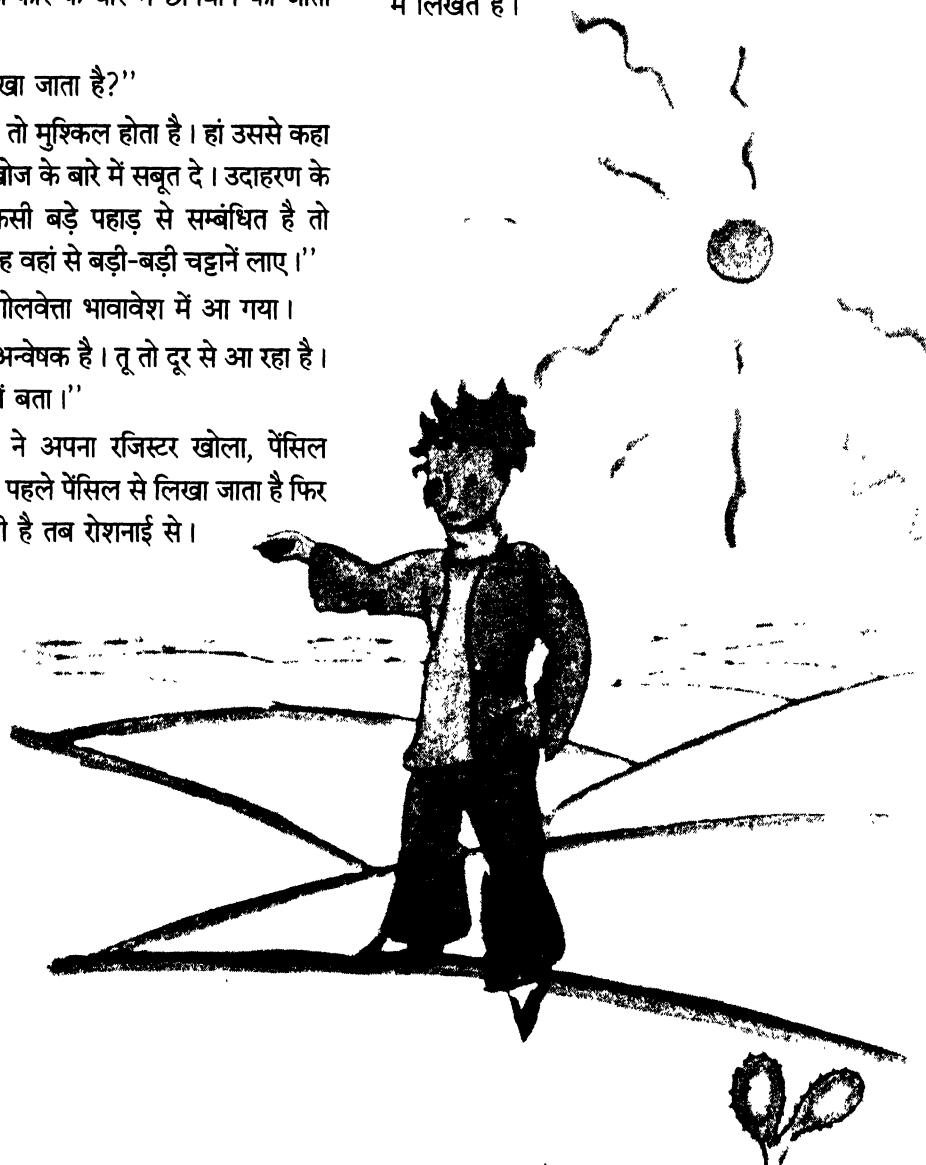
"फूलों-वूलों के बारे में हम लोग नोट नहीं लेते।"

"क्यों? फूल तो सबसे ज्यादा सुंदर होते हैं।"

"क्योंकि फूल तो क्षणभंगुर होते हैं।"

"क्षणभंगुर के क्या माने?"

"भूगोल की किताबें और सब किताबों से मूल्यवान होती हैं," वह भूगोलवेत्ता बोला, "वे कभी पुरानी नहीं पड़तीं। पहाड़ मुश्किल से कभी अपनी जागह बदलते हैं, सागर कभी भी नहीं सूखते। हम ऐसी ही स्थायी चीज़ों के बारे में लिखते हैं।"



“लेकिन सुप्त ज्वालामुखी फिर भड़क सकते हैं”, राजकुमार ने टोका। “पर क्षणभंगुर का अर्थ?”

“ज्वालामुखी शांत हों या जीवंत हमारे लिए कोई फर्क नहीं पड़ता। हमारे लिए तो यही महत्वपूर्ण है कि वे पहाड़ हैं, और पहाड़ पहाड़ ही हैं।”

“लेकिन क्षणभंगुर का मतलब?” राजकुमार अपने प्रश्न नहीं भूलता था।

“उसका मतलब है जो जल्दी ही समाप्त होने वाला हो।”

“मेरा फूल समाप्त हो जाएगा?”

“और क्या?”

राजकुमार ने सोचा मेरा फूल क्षणभंगुर है और सारी दुनिया से जूझने के लिए बस चार कोंटे हैं उसके पास। फिर भी उसे मैंने अकेला छोड़ दिया।

पहली बार उसे दुःख हुआ। पर फौरन साहस कर उसने पूछा, “आप मुझे कहां की यात्रा करने की राय देंगे?”

“तुम पृथ्वी पर जाओ। बड़ा नाम है उसका।”

अपने फूल के बारे में सोचता हुआ नहारा राजकुमार पृथ्वी की ओर चल पड़ा।

यात्रा के सातवें दौरे में वह पृथ्वी पर पहुंचा। धरती कोई ऐसा वैसा ग्रह तो है नहीं। यहां 111 राजा (अफ्रीकी राजाओं को लेकर) सात हजार भूगोलर्वता, नौ लाख व्यवसायी, पचहत्तर लाख शराबी, एकतीस करोड़ दम्भी—कुल मिलाकर करीब दो अरब वयस्क लोग रहते हैं इस धरती पर।

धरती कितनी बड़ी है इसका अंदाज़ा शायद इस बात से चल जाएगा कि बिजली के आविष्कार से पहले कुल मिलाकर छह महाद्वीपों पर रोशनी के लिए चार लाख बासठ हजार पांच सौ ग्यारह बत्तियां जलाने वालों की पूरी फौज़ की ज़रूरत पड़ती थी।

आसमान से देखने पर बड़ा मनोहारी लगता था यह दृश्य। यह फौज़ जब काम पर निकलती थी तो लगता था जैसे बैले नृत्य हो रहा हो। पहले न्यूजीलैंड और ऑस्ट्रेलिया की बत्तियां जलती थीं। जलाने के बाद वहां के बत्ती वाले सोने चले जाते थे। फिर आते चीन और साइबेरिया के बत्ती वाले, नृत्य के दूसरे क्रम में और थोड़ी देर के बाद नेपथ्य में चले जाते थे। फिर आते जाते थे रूस और भारत के बत्ती वाले, फिर अफ्रीका और यूरोप के फिर दक्षिणी और अंत में उत्तरी अमेरिका वाले। कोई यह नहीं भूलता था कि उन्हें कब मंच पर आना है और धरती के जगमगाते मंच पर मशाल नृत्य

चलता रहता था। अद्भुत होता था वह दृश्य।

केवल उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव के एकाकी बत्ती वाले अपने एक मात्र लैंप पोस्ट को जलाने बुझाने में साल में दो बार काम करते थे। उनके जीवन में न श्रम था न चिंता-उदास और आलसपूर्ण।

तेज व्यंग्यात्मक बात करने वाला आदमी कभी बिल्कुल सच नहीं बोलता। बत्ती वालों की बात करते समय मैंने थोड़ी अतिशयोक्ति कर दी। जिन्हें धरती के बारे में नहीं मालूम उन्हें मेरी बात से सही तस्वीर नहीं मिल पाएगी। इस विशाल धरती के बहुत छोटे से हिस्से पर आदमी रहता है। यदि कुल दो अरब मनुष्य एक दूसरे के पास खड़े हो जाएं, जैसे लोग किसी सभा में खड़े होते हैं, तो बीस मील लंबी और बीस मील चौड़ी जगह से ज्यादा जगह नहीं थोरे रोग। सारी मानवता को प्रशंसांत महासागर के एक ही छोटे से द्वीप में ठूंसा जा सकता है।

बड़े लोग इस बात पर विश्वास नहीं करेंगे। उनके खाल से वे बहुत बड़े भू-भाग पर काबिज़ हैं। वे अपने को बाओबाब की ही तरह महत्वपूर्ण समझते हैं। उनसे संस्थाओं की बात करनी चाहिए। यह उन्हें अच्छा लगता है। लेकिन इस काम में बहुत वक्त न लगाना। मुझ पर तुम्हें विश्वास है यह मैं जानता हूं।

धरती पर आकर जब उसने एक दम सुनसान पाया तो नहे राजकुमार को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसे डर लग रहा था कि वह पृथ्वी के अलावा किसी और ग्रह पर तो नहीं पहुंच गया कि उसने एक गोल सी सुनहरी चीज़ को रेत में हिलते देखा।

“शुभ रात्रि,” राजकुमार ने कहा।

“शुभ रात्रि,” सांप ने उत्तर दिया।

“मैं किस ग्रह पर हूं?”

“पृथ्वी पर, अफ्रीका में।”

“ठीक, तो फिर पृथ्वी पर कोई नहीं रहता?”

“रहते क्यों नहीं यह रेगिस्तान है, रेगिस्तान में कोई नहीं रहता पर पृथ्वी बहुत बड़ी है,” सांप ने कहा।

राजकुमार एक चट्टान पर बैठ गया और आकाश को निहारने लगा।

“पता नहीं सितारों पर रोशनी होती या नहीं कि हर कोई अपना तारा पहचान सके। ये देखो! मेरा ग्रह ठीक हमारे ऊपर-पर कितनी दूर।” राजकुमार ने इशारा किया।

“सुंदर है पर तू यहां क्या करने आया है?”

“मेरी एक फूल से पटी नहीं इसीलिए...”

“हूं।”

फिर दोनों चुप हो गए।

“अखिर आदमी लोग कहां है? यहां तो बड़ा एकाकी पन है।” राजकुमार ने चुप्पी तोड़ी।

“आदमियों के बीच भी एकाकीपन होता है।” सांप बोला।

राजकुमार सांप को देखता रहा, “बड़ा मजेदार जानवर है तू, बिल्कुल उंगली जैसा पतला।” राजकुमार ने कहा।

“लेकिन मुझमें एक राजा की उंगली से भी ज्यादा शक्ति है।” सांप बोला।

राजकुमार मुस्कराया, “इतना ताकतवर तो नहीं है तू..तेरे पांव तक तो है नहीं—चल फिर सकता नहीं।”

“मैं तुझे वहां ले जा सकता हूं जहां जहाज तक नहीं ले जा सकते।”

उसने राजकुमार की एड़ी के चारों ओर लिपट कर एक सोने की ब्रेसलेट जैसी कुण्डली बनाई।

“जिसे छू दू वह उसी धूल में मिल जाता है जिससे पैदा हुआ है लेकिन तू पवित्र है और फिर तू तो किसी और ग्रह से आया है...”

राजकुमार ने जवाब नहीं दिया।

“मुझे तुझ पर दया आती है। इस पत्थरों की पृथ्वी पर



इतना कमजोर दिख रहा है,” सांप बोला, “मैं तेरी मदद कर सकता हूं। यदि तुझे अपने ग्रह की याद आए तो मैं...”

“समझ गया, समझ गया,” राजकुमार बोला, “पर हर समय तू पहेलियां क्यों बुझाता है।”

“मैं उहें हल भी कर लेता हूं,” सांप बोला और वे फिर चुप हो गए।

पूरा रेगिस्तान पार करते हुए राजकुमार को बस एक फूल मिला, तीन पंखड़ियों वाला साधारण सा फूल...!

“नमस्ते,” राजकुमार ने कहा।

“नमस्ते” फूल ने जवाब दिया।

“आदमी लोग कहां हैं?”

फूल ने एक काफिला गुजरते देखा था कुछ दिन हुए।

“आदमी लोग? मेरे खाल से कुल छः सात आदमी होंगे धरती पर उन्हें गुजरते देखा था मैंने कई साल हुए। लेकिन मालुम नहीं मिलेंगे कहां। हवा उन्हें यहां से बहा ले जाती है—इधर-उधर, उनकी कोई जड़ें नहीं हैं और इसीलिए वे खानाबदेश होते हैं।”

“अलविदा,” राजकुमार ने कहा।

“अलविदा।”

नहा राजकुमार एक ऊंचे पहाड़ पर गया। अब तक उसने तीन ज्वालामुखी पहाड़ों के अतिरिक्त कोई पहाड़ नहीं देखा था और वे बस उसके घुटनों तक आते थे। अपने सुप्त ज्वालामुखी को वह एक स्टूल की तरह इस्तेमाल करता था। उसने सोचा कि इतने ऊंचे पहाड़ की चोटी से तो वह पूरी धरती और सारे मनुष्य एक साथ देख लेगा। ...लेकिन उसे केवल ऊंची-ऊंची चोटियां दिखाई पड़ी।

“नमस्कार,” नम्रता पूर्वक उसने कहा।

“नमस्कार... ...नमस्कार... ...नमस्कार,” की अनुगृंज उसे सुनाई पड़ी।

“कौन है आप?”

“कौन है आप... ...कौन है आप। कौन हैं आप... ...आप।” गूंज उठी।

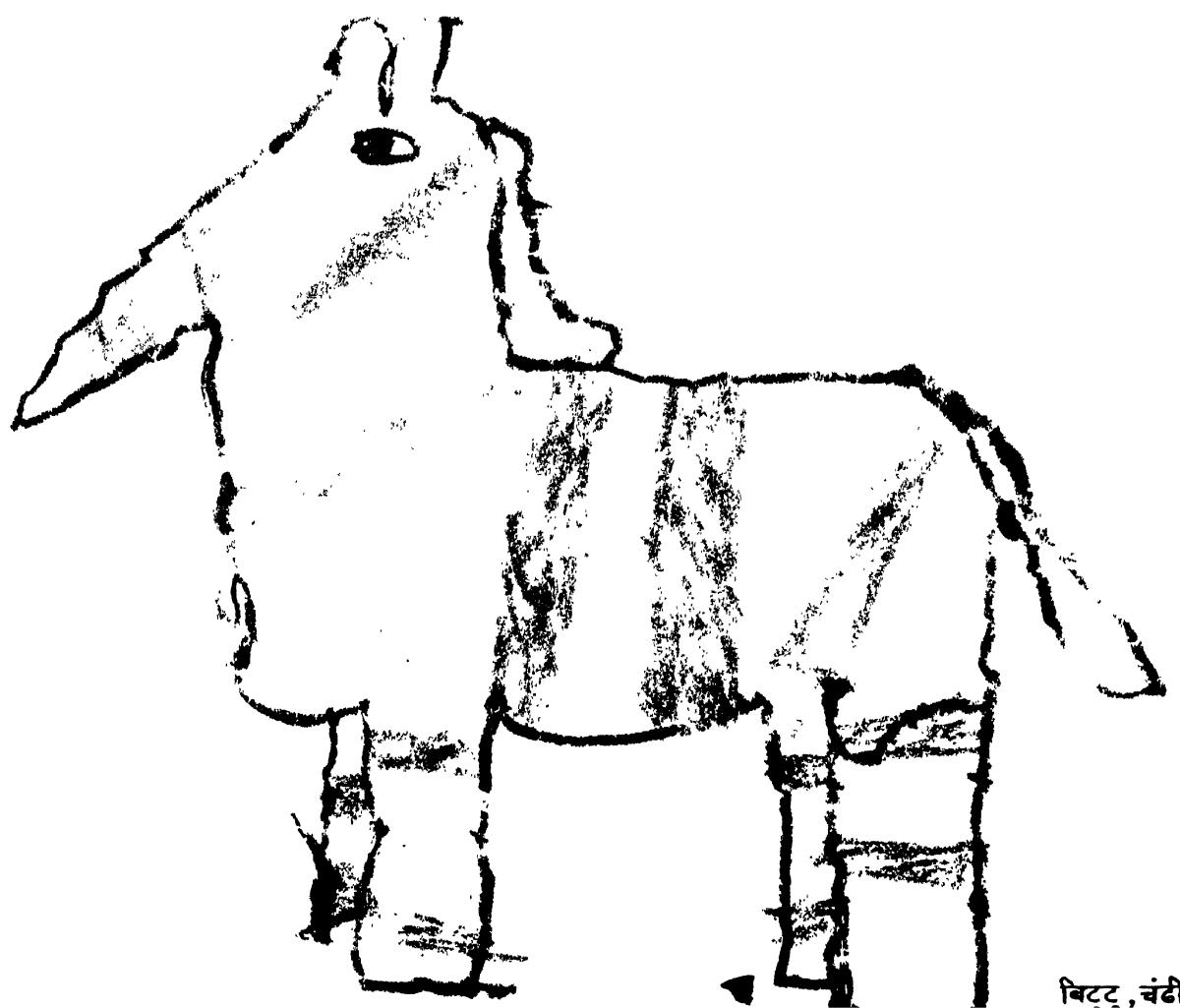
“मेरे दोस्त बन जाइए। मैं एकाकी हूं—मैं एकाकी हूं।”

अजीब है यह ग्रह, उसने सोचा, एकदम सूखा, नोकों वाला, खारा। यहां के लोगों के पास कल्पना शक्ति नहीं है। जो कहो दुहरा देते हैं... ...मेरे वहां मेरा फूल हर दम बोलने में पहल करता था। अपनी ही बात करना जानता है।

(अगले अंक में जारी)

लेखक : सैतेषज्जुपैरी

अनुवाद : लालबहादुर वर्मा



विट्ट, चंदीगढ

12697

